इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता में अस्मिता बोध

- डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
शास. बिलासा कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय बिलासपुर (छ. ग.)
सह-अध्येता, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान शिमला

शोध सार (सारांश)

यह युग विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के चरम विकास का है, जहाँ मनुष्य का एक पैर चंद्रमा पर तो दूसरा मंगल पर है। पिछली सदी ने जो विश्वयुद्ध, शीतयुद्ध और कई देशों के बीच सैन्य टकराव देखे हैं, परमाणु हथियारों से लैस राष्ट्रों की ताकत का अंदाजा लगाया है, अब तक धार्मिक कट्टरता, नस्लवाद, जातिवाद, आतंकवाद, भ्रष्टाचार, हिंसा, हत्या, बलात्कार और अन्याय से भरी अमानवीय घटनाओं को मनुष्य देख रहा है। इन सबसे मनुष्य कुंठित है, भयभीत है। उसे अपने अस्तित्व पर खतरा मंडराता अनुभव हो रहा है। उसे अपने, अपनों और अपनी पहचान के मिट जाने का भय कंपित कर रहा है। समाज में अनेक वर्ग, उपवर्ग, जाति एवं समुदाय अपने को हाशिये पर महसूस कर रहे है, अतः अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए वे आत्मरक्षा के "मूड" में खड़े हैं और अपने होने का उद्घोष कर रहे हैं, कुल मिलाकर यह सब अस्मिता का संघर्ष है। अस्मिता अर्थात पहचान या "आईडेंटिटी"। यह केवल मनुष्य की ही नहीं बल्कि पशु और प्रकृति की भी होती है। इसमें अस्तित्व का बोध होता है। अर्थात समाज में अपनी पहचान ही अस्मिता है।

अस्मिता अपने हक और अधिकारों को प्राप्त करना चाहती है, इसके अनेक रूप होते हैं, जैसे- व्यक्तिगत एवं सामूहिक (सामाजिक) अस्मिता । स्त्री, पुरुष, दलित, आदिवासी किन्नर, विकलांग (दिव्यांग), वृद्ध, युवा, पर्यावरण, भाषा, क्षेत्र, राष्ट्र सभी अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत हैं। इसलिए आज की कविता में सिर्फ पीड़ित की अस्मिता बोध नहीं है, बल्कि अस्मिता के व्यापक मायने और विविध आयाम चित्रित हैं। इक्कीसवीं सदी की कविता में अस्तित्व और अस्मिता के विविध रूप देखने को मिलते हैं। आज की कविता' मैं" से शुरु होती है जो व्यक्तिगत अस्मिता का उद्घोष है। इक्कीसवीं सदी का मनुष्य स्वयं को उपेक्षित, वंचित, शोषित व "नेगलेक्टेड" अनुभव कर रहा है इसलिए इस सदी की कविता अस्मिताबोध के रस से सिंचित है।

इस विषय में शोध की आवश्यकता और उपयोगिता-

विज्ञान के 'सरवाइवल ऑफ द फिट्टेस्ट' के सिद्धान्त के ठीक विपरीत अस्मितामूलक साहित्य का सिद्धान्त है- "सरवाइवल आफ द डिफीटेड"। इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता में लैंगिक उत्पीड़न व भेदभाव का शिकार होती स्त्री, जाति व्यवस्था की चक्की में पिसता, संघर्ष करता दलित, लैंगिक उपेक्षा और अपमान झेलता किन्नर (थर्डजेण्डर), सामाजिक उपहास का शिकार दिव्यांग, जल,जंगल,जमीन और अपनी संस्कृति के साथ खड़ा आदिवासी, कर्ज से परेशान किसान, बेरोजगारी से त्रस्त युवा, वृद्धाश्वमों में आंसू बहाते वृद्धजन, असंतुलित विकास मॉडल से प्रदूषित होता पर्यावरण तो है ही, बल्कि भाषायी, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय अस्मिताबोध भी चित्रित है। इसमें समाज के लगभग सभी वर्ग शामिल है।

हिंदी कविता में अस्मितामूलक विमर्शों पर अस्मिता के कुछ विशेष पक्ष जैसे- दलित, स्त्री, आदिवासी अस्मिता पर 20वीं सदी में शोध कार्य हुए हैं और 21वीं सदी की कविताओं पर कुछ अन्य अस्मिताओं के साथ अलग-अलग शोध कार्य किए गए हैं, पर इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविताओं में समग्र अस्मिताबोध पर शोध कार्य नहीं हुए हैं। यह कहना अतिश्योक्तिपूर्ण न होगा कि इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता मूलतः अस्मिता बोध की ही कविता है। इसलिए निसंदेह इस शोध कार्य की आवश्यकता और उपयोगिता है। आशा है कि हिन्दी कविता में अस्मिताबोध का चित्रण, नए रचनात्मक और सकारात्मक मनुष्य के निर्माण में सहयोगी होगा।

बीजशब्द-

21वीं सदी, हिंदी कविता, अस्मिता, विमर्श, दलित, आदिवासी, स्त्री, विकलांग, किन्नर, पर्यावरण, युवा, अल्पसंख्यक, व्यक्तिगत, मातृभाषा, स्थानीय, राष्ट्रीय, वैश्विक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक, मानवतावाद, साहित्य आदि ।

प्रस्तावना-

पंत जी ने लिखा है-

"वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।

उमड़कर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान।"

अर्थात कविता का जन्म दर्द की अनुभूति से माना जाता है। तभी तो क्रौंच पक्षी के वध से किसी हिंसक व्यक्ति का हृदय भी इतना द्रवित हो गया कि वह डाकू से कवि हो गया। कविता में ही वह शक्ति है कि अपनी संवेदना के बल पर वह कोयले को भी हीरा बना सकती है। कविता हृदय की वस्तु है, भाव प्रधान है जो हमारी संवेदनशीलता का विकास करती है, हमारे व्यक्तित्व को गढ़ती है। तभी तो धूमिल ने कहा था- "कविता भाषा में आदमी होने की तमीज है।"

ऐसा नहीं कि कवि कुछ अलग देखता है, विपिन कुमार अग्रवाल के अनुसार- “कवि के अनुभव असाधारण नहीं होते। उसे वही अनुभव होते हैं जो सबको। वह उसी दुनिया में रहता है जिसमें सब । अन्तर है अनुभव में तो इसमें कि उसने ध्यान को बहुत तरह से 'फोकस' करने का अभ्यास कर लिया है। बहुत सी मामूली घटनाएं जो हमसे छूट जाती हैं, वह देख या सुन लेता है।”

इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता-

कविता के आलोचक मानते हैं कि- “कविता एक कला है। कला मनुष्य और जानवर में भेद करती है। विज्ञान की तरह कला भी इसका माप है, कि मनुष्य जानवर से कितना आगे है। कवि शब्द से सुन्दरता गढ़ता है। शब्द तस्वीर है, प्रतीक है, ध्वनि है, अर्थवाहक है और बहुत कुछ और भी। शायद उसका कोई रंग भी हो। शब्द ही कवि को विरासत में मिला है।” इन शब्दों से ही वह जीवन की पुनर्रचना करता है। सत्य, कथ्य, तथ्य के साथ अपनी कल्पनाओं के संयोजन से कवि यथार्थ अथवा संभावित यथार्थ का ऐसा बिम्ब उपस्थित करता है कि चट्टान होती मानवीय धड़कनों में “साँच की आँच” से संवेदना का विकास हो सके। कविता का उद्देश्य जीवन, जगत और मनुष्य को बेहतर बनाना है। रामधारी सिंह दिनकर के शब्दों में- “कविता संस्कृति है, सभ्यता है, विज्ञान है।”

हिन्दी भाषा में रचित कविता को हिन्दी कविता कहते हैं। यह हिन्दी कविता उतनी ही पुरानी है जितनी की हिन्दी भाषा। आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल से गुजरते हुए इसने अपने आपको खूब परिष्कृत, परिमार्जित, उपयोगी बना लिया है, इसके भाव, भाषा, शिल्प में काफी परिवर्तन हुए हैं। आज की कविता सर्वथा नवीन रूप धारण किए हुए है। वह आज के उत्तर आधुनिकता, वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण, बाजारवाद और अस्मिताबोध के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रही है। कैलेण्डर के अनुसार इक्कीसवीं सदी को 1 जनवरी 2001 से 31 दिसम्बर 2100 ईस्वी सन् तक चिन्हांकित किया जा सकता है। इस सदी का तीसरा दर्शक गतिमान है। परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि किस विशेष तारीख को किसी भाषा, संस्कृति या विचारधारा का जन्म हुआ, यह एक सतत प्रक्रिया के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार- "किसी देश का साहित्य, उस देश की जनता के चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिंब है, जैसे-जैसे चित्तवृत्ति में परिवर्तन होता जाता है वैसे-वैसे साहित्य की प्रवृत्ति में भी परिवर्तन होता जाता है।"

यह युग विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के चरम विकास का है, जहाँ मनुष्य का एक पैर चंद्रमा पर तो दूसरा मंगल पर है। पिछली सदी ने जो विश्वयुद्ध, शीतयुद्ध और कई देशों के बीच सैन्य टकराव देखे हैं, परमाणु हथियारों से लैस राष्ट्रों की ताकत का अंदाजा लगाया है, अब तक धार्मिक कट्टरता, नस्लवाद, जातिवाद, आतंकवाद, भ्रष्टाचार, हिंसा, हत्या, बलात्कार और अन्याय से भरी अमानवीय घटनाओं को मनुष्य देख रहा है। इन सबसे मनुष्य कुंठित है, भयभीत है। उसे अपने अस्तित्व पर खतरा मंडराता अनुभव हो रहा है। उसे अपने, अपनों और अपनी पहचान के मिट जाने का भय कंपित कर रहा है। समाज में अनेक वर्ग, उपवर्ग, जाति एवं समुदाय अपने को हाशिये पर महसूस कर रहे है, अतः अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए वे आत्मरक्षा के "मूड" में खड़े हैं और अपने होने का उद्घोष कर रहे हैं, कुल मिलाकर यह सब अस्मिता का संघर्ष है।

अस्मिता की अवधारणा-

अस्मिता को परिभाषित करना एक जटिल कार्य है। विभिन्न विषयों के अनुसार अस्मिता के अर्थ अलग-अलग हैं, साधारणतया अस्मिता का अर्थ पहचान या "आइडेंटिटी" है। कैंब्रिज डिक्शनरी के अनुसार अस्मिता या "आइडेंटिटी" से अभिप्राय मनुष्य अथवा समूह की उसे विशेष पहचान से है जो उसे दूसरों से अलग बनाती है। अभय कुमार दुबे के अनुसार- "यह (अस्मिता) एक ऐसा दायरा है कि जिसके तहत व्यक्ति और समुदाय यह बताते हैं कि वह खुद को क्या समझते हैं।"

अस्मिता अर्थात पहचान या "आईडेंटिटी"। यह केवल मनुष्य की ही नहीं बल्कि पशु और प्रकृति की भी होती है। इसमें अस्तित्व का बोध होता है। समाज में अपनी पहचान ही अस्मिता है। पर आज इसकी अवधारणा विस्तृत और व्यापक हो गई है। विद्वानों का मानना है कि- "अस्मिता जितनी व्यक्ति की है, उतनी ही परिवेश और परंपरा की भी है।" स्वतंत्रता के पूर्व अस्मिता एक विचारधारा थी जो स्वतंत्रता के बाद एक आंदोलन बन चुकी है। एक व्यक्ति की एक से अधिक अस्मिताएं हो सकती हैं। समान अस्मिताओं का आपस में जुड़ाव होता है और असमान अस्मिताओं से अलगाव। अस्मिता बोध से आत्मबल, साहस, शांति और निश्चिंतता आती है तो दूसरी ओर शोषण, संघर्ष और विभेद पैदा होने के खतरे भी होते हैं।

हर व्यक्ति अपने आप में अनूठा और दूसरे से भिन्न होता है उसकी शारीरिक बनावट और मानसिक बुनावट अपने आप में एक स्वतंत्र और अनूठी सत्ता होती है हर व्यक्ति का अपना अस्तित्व अपने आप में पूर्ण होता है जिससे हर व्यक्ति की अपनी अलग-अलग अस्मिता हो सकती है। एक प्रकार की अस्मिता या पहचान वाले समूह का एक अस्मिता दिशा निर्धारित होता है जैसे एक माता-पिता के बच्चे, एक गांव, एक शहर, एक

स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, एक भाषा, एक क्षेत्र, एक देश, एक लिंग, एक जाति, एक धर्म, एक रंग या नस्ल के लोगों की अस्मिता एक सामूहिक अस्मिता बन जाती है।

इक्कीसवीं सदी की कविता में अस्तित्व और अस्मिता के विविध रूप देखने को मिलते हैं। आज की कविता' मैं" से शुरु होती है जो व्यक्तिगत अस्मिता का उद्घोष है। आज का कवि अपने परिवेश, परंपरा, क्षेत्र, राष्ट्र एवं विश्वकल्याण से प्रेरित है। कल वह युद्धमात्र से डरा हुआ था, आज वह बाजारवाद, पर्यावरण असंतुलन एवं अमानवीय घटनाओं से भयभीत है। इक्कीसवीं सदी का मनुष्य स्वयं को उपेक्षित, वंचित, शोषित व "नेगलेक्टेड" अनुभव कर रहा है इसलिए इस सदी की कविता अस्मिताबोध के रस से सिंचित है।अस्मिता पर गंभीर चिंतन, मनन, तर्क वितर्क, संवाद और बहस करना- अस्मिता मूलक विमर्श है ।

अस्मिता अपने हक और अधिकारों को प्राप्त करना चाहता है, इसके अनेक रूप है, जैसे- व्यक्तिगत एवं सामूहिक (सामाजिक) अस्मिता । स्त्री, पुरुष, दलित, आदिवासी किन्नर, विकलांग (दिव्यांग), वृद्ध, युवा, पर्यावरण, भाषा, क्षेत्र, राष्ट्र सभी अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत हैं। इसलिए आज की कविता में सिर्फ पीड़ित की अस्मिता बोध नहीं है, बल्कि अस्मिता के व्यापक मायने और विविध आयाम चित्रित हैं।

विज्ञान के 'सरवाइवल ऑफ द फिट्टेस्ट' के सिद्धान्त के ठीक विपरीत अस्मितामूलक साहित्य का सिद्धान्त है- "सरवाइवल आफ द डिफीटेड"। दलित शोषित, पीड़ित, प्रताड़ित, उपेक्षित, वंचित, थके, हारे, डरे, गिरे-पड़े वर्ग को वाणी देने का कार्य कर रही है यह अस्मिताबोध की कविता। अब तक शोषित की ही अस्मिता की चर्चा प्रमुख रही हैं लेकिन आज शोषकों की भी अपनी अस्मिता एकजुट हो गयी है। अस्मितामूलक विमर्श के विरुद्ध भी रचनाकार लामबंद होकर लिख और बोल रहे हैं। सहानुभूति बनाम स्वानुभूति की बहस खत्म नहीं हुई है।

इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता में अस्मिता बोध-

इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता में लैंगिक उत्पीड़न व भेदभाव का शिकार होती स्त्री, जाति व्यवस्था की चक्की में पिसता, संघर्ष करता दलित, लैंगिक उपेक्षा और अपमान झेलता किन्नर (थर्डजेण्डर), सामाजिक उपहास का शिकार दिव्यांग, जंगल और संस्कृति के साथ खड़ा आदिवासी, कर्ज से परेशान किसान, बेरोजगारी से त्रस्त युवा, वृद्धाश्वमों में आंसू बहाते वृद्धजन, असंतुलित विकास मॉडल से प्रदूषित होता पर्यावरण तो है ही, बल्कि भाषायी, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय अस्मिताबोध भी चित्रित है-

1. कविता या साहित्य की अस्मिता-

वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में जहां हर चीज राजनीतिक चश्मे से देखी जाती है, वहां कविता और साहित्य भी अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती नजर आती है। चाटुकारिता और चारणवाद की बढ़ती प्रवृत्ति ने समाज से जुड़े साहित्य को यथासंभव उपेक्षित व तिरस्कृत करने का प्रयास किया है। मानवतावादी व अस्मितावादी साहित्य स्वयं को स्थापित करने व अपने अस्मिता बोध को बचाए रखने की निरंतर कोशिश कर रही है।

1.साहित्य की अस्मिता चित्रित कर रही इंदु जैन की "कविता" शीर्षक से लिखी गई कविता की कुछ पंक्तियां यहां उद्धृत हैं-

"दरवाज़ा खटखटाती है

कविता

बेहोश नींद में करवट
खिड़कियों से लिपटे मुर्दों से जूझती
फेफड़ों में हवा फूंकती
अमृत की कोशिश करती है
कविता
कविता हिम्मत नहीं दिलाती
कभी-कभी
हिम्मत न कर पाने वाले की
सिर्फ़ आवाज़ बन जाती है
कविता"

2. “कविता” शीर्षक से कुसुम जैन की लिखी गई कविता जिसमें ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान अस्मिताबोध के युग में हर व्यक्ति स्वयं को उपेक्षित, तिरस्कृत महसूस करता है, ऐसी स्थिति में कविता हमारी पीड़ा और दुखों को अभिव्यक्त करने का सरलतम माध्यम बन जाती है। कुसुम जैन लिखती हैं कि जीवन के दुखों को बाहर करने के लिए शायद कविता/साहित्य ही उत्तम मार्ग है । कविता की पंक्तियां देखिए-

“दुखों को
बहने के लिए चाहिए
एक रास्ता
कविता !
कहीं तुम
दुख की नदी तो नहीं”

3. “रोटी और कविता” शीर्षक से लिखी गई कुसुम जैन की कविता इस और इशारा करती है कि कविता या साहित्य का हमारे जीवन में कितना अधिक महत्व है, और इसके अस्तित्व को बनाए रखना कितना जरूरी है। पंक्तियां देखिए-

“रोटी में कविता की महक
कविता में रोटी की महक
जीवन को देती है
एक नई पहचान
रोटी और कविता
दोनों का होना
दुनिया की सेहत के लिए

निहायत जरूरी है

तुम्हारी जरूरत की सूची में

मैं शामिल हूं

और रोटी भी

लेकिन मेरी कविता नहीं”

इस तरह आज के भागमभाग की जिंदगी में साहित्य और कविता के अस्तित्व पर खतरे की ओर संकेत करते हुए साहित्य या कविता के अस्तित्व और अस्मिता को बचाने की बात कही गई है।

2. वर्तमान या ‘आज’ की अस्मिता**-**

जीवन ना अतीत है ना भविष्य, वह तो वर्तमान है, जिसकी हत्या बड़ी क्रूरतापूर्वक कर दी जाती है। ‘आज’ के ऊपर सदैव अस्मिता का खतरा है। इक्कीसवीं सदी का कवि इसी वर्तमान या ‘आज’ की अस्मिता बोध से भरा हुआ ‘आज’ या वर्तमान के अस्तित्व को बचा लेना चाहता है।

1. अजीत जोगी की कविता "आज" की पंक्तियां देखिए-

“कभी कभी

सन्नाटे में

एक आवाज आती है

आह्वान करती है

आज मेरे साथ हो लो

आज मेरे साथ जी लो

गौतम-गांधी

महावीर-महात्मा

पल दो पल इन्हें छोड़ो

राजनीति, सत्ता

कुर्सी, अधिकार

पल दो पल इनका चक्कर भी छोड़ो

आज में जियो

कल तो 'काल' का है

उसे कल पर छोड़ो।"

3. व्यक्तिगत अस्मिता**-**

मनुष्य स्वयं को इस सृष्टि की सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ, सर्व विकसित, बुद्धिमान प्राणी मानता है।मनुष्य के जीवन को सुखद, आरामदायक और बेहतर बनाने के लिए ही परिवार, समाज, देश व धर्म आदि संस्थाओं का उद्भव और विकास हुआ है। सभ्यता और संस्कृति के केंद्र में मनुष्य ही है। मनुष्य को प्रभावित करने वाले अनेक कारक हैं जो उन्हें विभिन्न विशेषणों में जकड़ने की कोशिश करते हैं। जबकि मानव जन्म से ही एक स्वतंत्र और पूर्ण इकाई है उसकी व्यक्तिगत अस्तित्व और अस्मिता है। लेकिन अमानवीय परंपराओं ने सदा उसके व्यक्तिगत अस्तित्व को कुचलने का प्रयास किया है। व्यक्ति की निजता, एकांत, सुख-दुख, आत्मगौरव, आत्मबोध, स्वकेंद्रित चिंतन मनन, स्व की पहचान, अपने तरीके से जीवन को देखने व जीने का भाव होता है। मैं कौन हूं, क्या हूं, कैसा हूं, मेरा वास्तविक स्वरूप क्या है? यह सब व्यक्तिगत अस्मिता के अंतर्गत है। जाति, धर्म, क्षेत्र, रंग, वर्ण, भाषा, लिंग,,शिक्षा, व्यवसाय आदि की पहचान से परे एक व्यक्ति का अस्तित्वबोध ही व्यक्तिगत अस्मिता है। नितांत एकांत में व्यक्ति का 'स्वबोध' है। संस्थाएं व्यक्ति को मार डालने को आतुर हैं, ऐसे में व्यक्तिगत अस्मिता विमर्श के केंद्र में होना चाहिए।

1. कुंवर नारायण की कविता "पुनश्च" में कवि अपने सारे सामूहिक पहचान को छोड़कर व्यक्तिगत अस्मिता बोध से भरा हुआ, अपने बचपन के उन पलों को फिर से जी लेना चाहता है, जो चुक गई (बीत गई) हैं -

"मैं सीखना चाहता हूँ

फिर से जीना...

बच्चों की तरह बढ़ना

घुटनों के बल चलना

अपने पैरों पर खड़े होना

और अन्तिम बार

लड़खड़ा कर गिरने से पहले

मैं कामयाब होना चाहता हूँ

फिर एक बार

जीने में"

2. गीत चतुर्वेदी की कविता "सबसे प्रसिद्ध प्रश्न 'मैं क्या हूँ' के कुछ निजी उत्तर" में कवि यह प्रकट करना चाहता है कि एक साधारण व्यक्ति स्वयं को किस प्रकार अपूर्ण, अपरिपक्व महसूस करता है, जैसे अधपकी और अधजली रोटी । वह अपने अस्तित्व और अस्मिता के संबंध में किस प्रकार चिंतित है, देखिए-

"रोटी बेलकर उसने तवे पर बिछाई

और जिस समय उसे पलट देना था रोटी को

ठीक उसी समय एक लड़की का फोन आ गया

वह देर तक भूले रहा रोटी पलटना

मैं वही रोटी हूँ

एक तरफ से कच्ची, दूसरी तरफ से जली हुई"

3. दिनेश कुशवाह की कविता "विश्वग्राम की अगम अंधियारी रात" में कवि ने एक सरल, सहज, साधारण, ईमानदार आम आदमी की पीड़ा को व्यक्त किया है, जिसमें दर्शाया गया है कि आज के समय में ईमानदार होना अस्तित्व के लिए संकट उत्पन्न कर देता है-

“आजकल ईमानदार आदमी

कुर्सी में चुभती कील जैसा है

कोई भी ठोक देता है उसे

अपनी सुविधा के अनुसार

बहुत हुआ तो

निकालकर फेंक देता है।

x x x x

ईमानदार आदमी का हश्र देखकर

डर लगता है, और

बेईमानों की ओर देखने पर वे

आँखें निकाल लेते हैं।"

4. अजीत जोगी की कविता "एक सुबह काठमांडू की" में कवि यह प्रकट करना चाहता है कि व्यक्ति अकेला है उसका आधिपत्य प्रकृति में नहीं है फिर भी वह खुद को क्या से क्या समझने लगता है। 21वीं सदी की यह कविता जीवन की क्षणभंगुरता और मनुष्य की लघुता अर्थात लघु अस्तित्व का बोध कराती है-

“न यह सुबह मेरी,

न ओस,

न सूर्य,

मेरे जैसे,

कितने,

न जाने कितने नश्वर,

इन सबने साक्षी बनकर,

चलते (रवाना) किए हैं,

उस शाश्वत,

चलायमान अनन्त चक्र में,

फिर क्यों

अकिंचन मैं

अपने को कुछ

समझने लगता हूँ"

5. अजीत जोगी की कविता "मेरी मंजिल" यूं तो उनके निजी दर्शन व स्वभाव की कविता है, पर आज की संघर्षपूर्ण परिस्थितियों में जीवन के लिए लड़ता हुआ आदमी अपने इसी अस्मिताबोध से भरा हुआ सा लगता है, पंक्तियां देखिए-

"अपनी जिन्दगी में मैंने,

सहारों का अहसान नहीं लिया

सफर कठिन था, फिर भी,

किनारों की तलाश नहीं की।

क्योंकि,

उफनती लहरों से लड़ना

भयावह भँवरों में फँसकर

बाहर निकल आना

आदत है मेरी।

जिससे अमूमन

डरते हैं लोग

वही तूफान,

मंजिल है मेरी।"

6. मलखान सिंह सिसौदिया की कविता "अंधियारों से लड़ता हुआ " की पंक्तियां यह दर्शाती है कि मानवतावादी कवि किस तरह मानवता के अस्तित्व को बचाने के लिए सतत संघर्षशील है, व्यक्तिगत अस्मिता को मिटाने के लिए आतुर शक्तियों से वह लड़ रहा है, पंक्तियां देखिए-

"जी सके मनुज की तरह मनुज

लड़ता इसलिए रहूँगा मैं,

यदि इसे बगावत कहते हो

तो बागी सदा रहूँगा मैं।

यह है संघर्ष मनुजता का

विद्रोह न केवल मेरा है,

ज्योति के लिए अँधियारों से

यह लड़ता हुआ सवेरा है।"

7. आज के बाजारवादी, पूंजीवादी संस्कृति की होड़ में आदमी यंत्रवत सतत भाग रहा है, उसके पास अपने लिए और अपनों के लिए बिल्कुल भी समय नहीं है। यह भागम भाग मनुष्य के व्यक्तिगत अस्तित्व और अस्मिता के लिए खतरा है जहां वह खुद को खो रहा है। ऐसी स्थिति में आज की कविता रुककर, ठहर कर जीवन को देखने की बात करती है। महेश वर्मा की कविता "कुछ नहीं" की पंक्तियां देखिए-

"व्यस्तता छोड़कर एक पल को रुकना होगा

सुननी ही होगी मेरी बात

संक्षेप में कहने को मत कहना

कुछ नहीं है बात - इसी से देर लगेगी"

4. लोकतांत्रिक और संवैधानिक अस्मिता**-**

स्वतंत्रता प्राप्ति और भारतीय संविधान के लागू हो जाने के बाद भारत लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में अस्तित्व में आया। सबको सम्मानजनक, स्वतंत्र जीवन जीने का अवसर मिले, समता, न्याय, बंधुत्व से देश व समाज के विकास का स्वप्न देखा गया, लोकतांत्रिक एवं संवैधानिक मूल्य निर्धारित किए गए। पर आज इन मूल्यों के अस्तित्व पर संकट के बादल छाए हुए हैं, यह शुभ नहीं कहे जा सकते। आज हमारी लोकतांत्रिक और संवैधानिक अस्मिता खतरे में है।

1. कुमार अंबुज की 'भरी हुई बस में लाल साफे वाला आदमी' शीर्षक कविता इस बात पर एतराज करती है कि एक लोकतांत्रिक देश में महत्वपूर्ण लोगों को सुविधा और सुरक्षा उपलब्ध है, लेकिन गरीब, असहाय और जरूरतमंद लोगों को नहीं, ऐसा क्यों ? यह सवाल उठाती पंक्तियां-

"वह जानना चाहता है इस बस में

जब भरे पूरे स्वस्थ विधायक के लिए

सुरक्षित है बैठने की जगह

तो एक बीमार बच्चे

और थके-हारे इनसान के लिए क्यों नहीं?"

2. राजनीति की मूल्यहीनता की ओर संकेत करते हुए आम आदमी के माध्यम से कवि पूछता है कि वोट डालने के लिए हमें केवल दो मील चलना पड़ता है, लेकिन इलाज के लिए हमें 20 मील क्यों चलना पड़ता है-

"जब वोट डालने के लिए,

चलना पड़ता है

सिर्फ दो मील,

तो इलाज कराने के लिए

बीस मील क्यों ?"

3. दिनेश कुशवाह की कविता "आज भी खुला है, अपना घर फूंकने का विकल्प" यह चित्रित करती है कि लोकतांत्रिक और संवैधानिक मूल्यों को लहूलुहान करके किस तरह विघटनकारी, चापलूसी, चाटुकारिता, और अवसरवाद की सामंतवादी राजनीति चल रही है, जो देश व समाज के लिए अत्यंत घातक है-

"पचास साल के लोकतंत्र पर गिरी है

वंशवाद, गुंडागिरी, पैसा और जाति की गाज

कोढ़ में खाज की तरह कि

अंधे बाँटते हैं रेवड़ी

और चीन्ह-चीन्ह कर देते हैं।

दुर्योधनों की भीड़ से सभाएँ भरी हैं

मंच से माँ कहते हुए भारत को

रोज ही उसकी साड़ी टॉन रहे हैं दुःशासन

भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य

प्रश्न पूछने का पैसा लेते हैं

एकलव्यों के अँगूठे कटते रहें तो

कृष्ण को कोई शिकायत नहीं है।

किसी भी समय में इतने धृतराष्ट्र नहीं थे !!!"

4. अरुण कमल की कविता "पता नहीं क्यों खोज रहे थे हत्यारे मुझे" की पंक्तियां बतलाती हैं कि जाति के आधार पर होने वाले भेदभाव, किस तरह मानवता और लोकतंत्र की हत्या कर रहे हैं। निर्दोष होने पर भी जाति के आधार पर प्रताड़ना और मौत सुनिश्चित सा हो गया है। यह लोकतांत्रिक और संवैधानिक मूल्यों का खुला उल्लंघन है, पंक्तियां देखिए-

"और मैं मारा गया

इसलिए कि मेरी नाभि में कस्तूरी थी

और रोओं से झर रही थी सुगंध लगातार

जानता था एक दिन नष्ट ही करेगी पवित्रता

इस जीवन के कारण मरूँगा तय था

मैंने हरदम अच्छा बर्ताव किया

न किसी का बुरा ताका न कभी कुछ चाहा

और अब अचानक मैं मारा जाऊँगा

सिर्फ इसलिए कि मेरी जाति वो नहीं जो हत्यारों की.."

5. मानवीय **(**मानवतावादी**)** अस्मिता**-**

मनुष्य होना अपने आप में बड़ी बात है। प्रसिद्ध लेखक व समीक्षक प्रोफेसर चौथीराम यादव के कथन में- "लेखक होना बड़ी बात है, बड़ा लेखक होना और बड़ी बात है, लेकिन मनुष्य होना सबसे बड़ी बात है।" जन्म से आदमी आदमी होता तो है, परंतु जब मानवीय मूल्य उनमें विकसित होते हैं, तब सही अर्थों में वह मनुष्य मनुष्य कहलाने योग्य हो पाता है। इसी मनुष्यता या मानवताबोध को मानवीय या मानवतावादी अस्मिता कह सकते हैं। इस मानवीय अस्मिता का ह्रास तेजी से हुआ है और निरंतर होते हुए दिखाई पड़ता है, जिसे बचाया जाना परम आवश्यक है। आज मानव और उसकी मानवता को संकट से उबारना जरूरी है।

1. राजेश जोशी की कविता "उन्होंने रंग उठाए" में कवि मानवीय अस्मिता के सवालों को बेहतरीन ढंग से उठाते हैं। वह लिखते हैं-

"उन्होंने रंग उठाए

और आदमी को मार डाला।

उन्होंने संगीत उठाया

और आदमी को मार डाला।

उन्होंने शब्द उठाए

और आदमी को मार डाला।

हत्या का

एकदम नया नुस्खा

तलाश किया उन्होंने।"

2. राजेश जोशी की कविता "पागल" यह बताती है कि जाति, धर्म में बंटा हुआ भारतीय समाज कितना संवेदनहीन होता जा रहा है, उसकी संवेदना नष्ट हो रही है। इंसान को इंसान के अलावा सब कुछ दिखाई देता है पर इंसान नहीं। इंसान की पहचान इंसान के रूप में न होकर जाति धर्म और अन्य आधारों पर हो गई है, इससे इंसानियत मिटती जा रही है। इंसान का परिचय या 'आईडेंटिटी' इंसान होना नहीं रह गया है। लोग एक दूसरे को उनकी जाति और धर्म के आधार पर पहचानते हैं जो कीअत्यंत कष्टदायक है, और इस पहचान के आधार पर हमारी संवेदनाएं भी बट गई है। कविता की निम्नलिखित पंक्तियां देखी जा सकती हैं-

"पंद्रह या सोलह बरस की उस लड़की के कपड़े

जगह जगह से फटे हुए थे

वह एक पेड़ के नीचे खड़ी कभी रोने लगती

कभी हँसने लगती

पास ही दो तीन गाँववाले भी खड़े

आपस में कुछ बतियाते हुए

तभी दंगाइयों का एक गिरोह आया

और उनमें में एक जोर से चिल्लाया

ए लड़की तू हिन्दू है या मुसलमान ?"

6. वृद्ध अस्मिता**-**

प्रत्येक मनुष्य जन्म लेता है, शिशु से बालक, युवा, प्रौढ़ और वृद्ध होता है, फिर काल के गाल में समा जाता है। जो आज युवा है, वह एक दिन वृद्ध होता है, तब उसे सहारे की जरूरत पड़ती है। लेकिन दुर्भाग्य से वृद्ध होने की अवस्था में वह अकेला हो जाता है। एक समय भारत में संयुक्त परिवारों की परंपरा थी जो आज लगभग समाप्त हो गई है। अधिकांश वृद्ध स्त्री-पुरुष आज या तो वृद्ध आश्रमों में रहते हैं अथवा निराश्रित असहाय की तरह एकांत और भिक्षाटन का जीवन जी रहे हैं। वृद्ध स्त्री पुरुष आज अपने अस्तित्व को लेकर चिंतित हैं। उनके साथ आए दिन अपराधऔर अपमान की घटनाएं घटित हो रही हैं। समाज के इस महत्वपूर्ण कड़ी को सम्मान, सुरक्षा देने की जरूरत है, ताकि वृद्ध अपने परिवार के बीच ही रहे और उनकी उचित देखभाल हो सके।

1. वृद्ध हमारे समाज के मार्गदर्शक हैं, वह अनुभव संपदा के भंडार हैं, लेकिन आज परित्यक्त हैं । उनके अस्तित्व को लेकर मार्मिक ढंग से अस्मिता बोध की कविताएं लिखी जा रही हैं। राजेश जोशी की कविता की पंक्तियां देखिए-

"एक बूढ़ा मुझे अक्सर रास्ते में मिल जाता है

कहता है कि उसके लड़कों ने उसे घर से निकाल दिया है

कि उसने पिछले तीन दिन से कुछ नहीं खाया है

लड़कों के बारे में बताते हुए वह अक्सर रुआँसा हो जाता है

और अपनी फटी हुई कमीज़ को उघाड़कर

मार के निशान दिखाने लगता है

कहता है उसने बचपन में भी अपने बच्चों पर

कभी हाथ नहीं उठाया

लेकिन उसके बच्चे उसे हर दिन पीटते हैं।"

7. धार्मिक**-**सांस्कृतिक अस्मिता**-**

धर्म और संस्कृति मानव जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं, इनका अस्तित्व हजारों वर्षों से है। इनके अस्तित्व और अस्मिता को लेकर काफी रचनाएं लिखी गई हैं। आदिकाल से अब तक धार्मिक व सांस्कृतिक मुद्दे अति संवेदनशील रहे हैं, इन्हें आधार बनाकर ही बड़े-बड़े युद्ध, हिंसा, बलवा, मारकाट, बलात्कार जैसी घटनाएं हुई हैं और हो रही हैं। कभी मनुष्य के कारण धर्म और संस्कृति का अस्तित्व खतरे में नजर आता है तो कभी धर्म और संस्कृति के कारण मनुष्य का। आज के युग में इनकी अस्मिता परिवर्तनशील दिखाई देती है।

1. कुंवर नारायण की कविता "अयोध्या-92" में धार्मिक-सांस्कृतिक स्थलों के राजनीतिकरण हो जाने से उत्पन्न हुए धार्मिक-सांस्कृतिक अस्तित्व संकट का चित्रण किया गया है, पंक्तियां देखिए-

"इससे बड़ा क्या हो सकता है

हमारा दुर्भाग्य

एक विवादित स्थल में सिमटकर

रह गया तुम्हारा साम्राज्य

अयोध्या इस समय तुम्हारी अयोध्या नहीं

योद्धाओं की लंका है

मानस तुम्हारा चरित नहीं

चुनाव का डंका है।''

2. राजेश जोशी की कविता "यह धर्म के विरुद्ध है" में कवि कहना चाहता है कि धार्मिक रूढ़ियों के आगे मनुष्य इतना कमजोर या लाचार हो जाता है कि अपना नुकसान होने पर भी वह उन चीजों के विरुद्ध ना ऐसा कुछ कह पाता है, और ना ही ऐसा कुछ कर पाता है, क्योंकि यह अन्य लोगों को धर्म का विरोध प्रतीत होता है। धर्म का डर इस कदर मनुष्य पर हावी है कि कुछ भी कहने या करने के पहले वह बार-बार सोचता है कि कहीं यह धर्म के विरुद्ध तो नहीं। डरा हुआ आदमी कभी धार्मिक नहीं हो सकता, पर दुख की बात है कि आजकल इसे ही धर्म माना जाता है। जबकि वास्तविक धर्म और संस्कृति आज खतरे में है। कविता की पंक्तियों में डरे हुए व्यक्ति का चित्र देखिए-

"मकान मालिक परेशान है

और आँगन में टहल रहा है, देख रहा है

फैलती ही जा रही हैं

पीपल की जड़ें

और धसकता ही जा रहा है मकान

अपनी ही जमीन से

निर्वासित होता जा रहा है वह

वह मन ही मन बड़बड़ा रहा है

ऐसी की तैसी इस....

पर असम्भव है इसके आगे कुछ भी कहना

क्योंकि यह

धर्म के विरुद्ध है।"

3. भूमंडलीकरण और बाजारवाद ने हमारी धार्मिक-सांस्कृतिक अस्मिताओं पर चोट की है।"खूबसूरत घर" कविता में कवि ने यह बताने का प्रयास किया है कि आज लोग किस तरह अपने धर्म-संस्कृति और परंपराओं से दूर होते जा रहे हैं। वे विदेशीपन में बहते हुए अपनी मूल जड़ों से दूर निकलते जा रहे हैं, यहां तक कि अपने धार्मिक चिन्ह और मान्यताएं भी भूलते जा रहे हैं। कविता की पंक्तियां देखिए-

"खूबसूरत घरों में नहीं रहते

पीतल के लोटे, कांसे के कटोरे

यहाँ नहीं रहती गंगाजल की बोतल

गीता, रामायण राधा-शिव के कलेण्डर

खूबसूरत घरों में रहते हैं उगे

तमाम तरह के विदेशी फूल

खूबसूरत घरों में नहीं उगता

तुलसी का पौधा।"

4. लीलाधर मंडलोई की कविता "धरती की सुगंध" भी उस नई पीढ़ी का चित्रण करती हैं कि किस कदर नई पीढ़ियां अपने धर्म, संस्कृति, परंपराओं से अपरिचित होती जा रही हैं। साथ ही नई पीढ़ी उनकी उपेक्षा भी कर रही है,इससे धार्मिक और सांस्कृतिक अस्मिता पर खतरा मंडरा रहा है। कविता की पंक्तियां देखिए-

"पिछवाड़े कई पौधे हैं

एक पौधा तुलसी का जिस पर पानी चढ़ाने

और दीया वारने का संस्कार है

सिर्फ माँ ही उसकी साज-सँवर करती है

और सिर नवाती है

X X X

तीसरी पीढ़ी नहीं जानती कुछ भी इस बारे में

दूसरी पीढ़ी उसे फिजूल समझती है या गैर जरूरी

कुछ साफ नहीं।"

8. कृषक अस्मिता**-**

ऐसा कहा जाता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है और इसके केंद्र में किसान को होना चाहिए। पर ऐसा नहीं है, किसान कमजोर है, लाचार है। कृषि कार्य की महंगी लागत, ऋण, महाजनी (सूदखोरी) व्यवस्था, अनाज (उपज) का उचित मूल्य नहीं मिल पाना, किसान विरोधी नीतियां आदि उनके बदहाली के लिए जिम्मेदार हैं। प्रतिवर्ष हजारों किसान आत्महत्या कर लेते हैं। देश का अन्नदाता कृषक अपने अस्तित्व

और अस्मिता के लिए संघर्ष कर रहा है। 21वीं सदी की कविता कृषक अस्मिता के सवालों को मजबूती और सकारात्मकता के साथ उठाती है।

1. अरुण कमल की कविता "मैं वो शंख महाशंख" में ऐसे ही गरीब, मजदूर, स्वाभिमानी और संघर्षशील किसानों को उठ खड़े होने की, एकजुट होने की प्रेरणा हैं। कविता की पंक्तियां देखिए-

"यह चुप बैठने का समय नहीं

सँभालो अपने टूटे बिखरे औजार

हमारे हथियार कमजोर हैं पर पक्ष मजबूत

चारों तरफ से फिर उठ रही है वो पुकार

नए कंठों से

नहीं आत्महत्या नहीं

ओ विदर्भ तेलंगाना के किसानो !

उठो और छुरी की धार को उलट दो

धर्मों जातियों बोलियों में बंटे लोगो !

देखो कि सबके कपड़े फटे हैं

सब बेकार बेहाल हैं

सबके घाव हैं गहरे ।"

2. अरुण कमल की यह कविता किसानों, मजदूरों के शोषण का विरोध करती हुई आह्वान करती है कि उनके पक्ष में आवाज बुलंद किया जाना जरूरी है, देखिए कविता की पंक्तियां-

"बोलना आसान है देवयानी के पक्ष में

इस गरीब के पक्ष में तो बोलकर देखो

बोलना आसान है ओबामा के खिलाफ

इस जमींदार ठेकेदार इजारेदार के खिलाफ

जबान तो खोलो ।"

9. पर्यावरणीय अस्मिता**-**

मनुष्य ही नहीं समस्त जीव जंतु पशु पक्षियों के रहने का आवास है - पर्यावरण। मनुष्य ने विकास के नाम पर प्रकृति और पर्यावरण को सर्वाधिक नुकसान पहुंचाया है, इस कारण पर्यावरण का अस्तित्व खतरे में है। वैज्ञानिक कहते हैं कि मनुष्य के जीवन को सबसे बड़ा खतरा पर्यावरण प्रदूषण से है। आज के समय में पर्यावरण की अस्मिता को बचाए रखना सर्वोच्च प्राथमिकता के अंतर्गत होना चाहिए। 21वीं सदी की हिंदी कविता पर्यावरण के अस्तित्व और अस्मिता को लेकर अत्यंत गंभीर विमर्श सामने रखती है।

1. राजेश जोशी की कविता "वृक्षों का प्रार्थना गीत : दो" में वृक्ष मानव के अस्तित्व को खतरे में देखकर यह प्रार्थना करते हैं कि जहां एक तरफ मानवीय अस्मिता खतरे में है, ऐसी स्थिति में प्रकृति में बसंत का आगमन उचित नहीं होगा। इसलिए वह कट जाना चाहते हैं, जल जाना चाहते हैं, लेकिन बच्चे, औरतें, पुरुष और निरपराध लोगों को मरते हुए देखना नहीं चाहते । यहां परअस्तित्व संकट से जूझता हुआ पर्यावरण अभी भी मानव के प्रति संवेदनशील और उसके अस्तित्व को लेकर चिंतित है। कविता की पंक्तियां देखिए-

"अब हमारी रात में हमारी नींद में

सिर्फ मृत्यु घूमती है नंगे पाँव

दौड़ते भागते हाँफते

असमय मरते हैं बच्चे औरतें पुरुष

निरपराध !

कोई कब तक, कब तक देख सकता है

अनवरत मरते, दम तोड़ते हजारों लोगों को

हर रात !

मत छुओ हमें मत छुओ बसन्त

हो सके तो लकड़हारों को बुलाओ

जो काट डालें

आग में झोंक दें हमें

मुक्त कर दें हमें

इस भयावह स्वप्न से !"

2. राजेश जोशी की कविता "हवा" में वायु प्रदूषण की भयावह स्थिति को दिखाया गया है कि किस तरह से वायु की अस्मिता खतरे में है। पंक्तियां देखिए-

"हवा को डस लिया है

किसी करात ने

या कौड़िया साँप ने

लहर मारता है जहर

थरथराता है रह-रहकर

हवा का बदन

भागो भागो भागो

जहाँ भी खुला हो

थोड़ा-सा आकाश

जहाँ भी बची हो

थोड़ी-सी हवा पवित्र,

भागो भागो भागो

चीखता है

सारा शहर"

3. राजेश जोशी की कविता "उसकी परछाई" में चिड़िया के माध्यम से इस बात का संकेत है कि पशु-पक्षी भी अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए संघर्ष कर रहे हैं। निम्नांकित पंक्तियों को देखिए-

“हज़ारों मील दूर

एक चिड़िया

पिंजरे के खिलाफ

हवा के लिए लड़ रही है

एक काली चिड़िया

उसकी परछाई

उजली धूप है।

एक चिड़िया

सात समुन्दर पार

उजाले और आकाश

के लिए लड़ रही है

एक सफेद चिड़िया

उसकी परछाई

दूधिया चांदनी है।"

4. राजेश जोशी की कविता "देख चिड़िया" में कवि ने चिड़िया यानी पशु-पक्षी को भी अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए लड़ने का आह्वान किया है। वह कहते हैं-

"बारूद के रंग वाली चिड़िया

बारूद का सुभाव भी सीख

उड़ना-गाना

तो ठीक

लेकिन

ताव खाना भी सीख।"

5. राजेश जोशी की कविता "पहाड़ (एक)" की पंक्तियां इस और संकेत करती है कि मनुष्य विकास के नाम पर पहाड़ों के भीतर से खनिज संसाधनों का इतना अधिक दोहन कर लेता है कि पहाड़ जो आज यथार्थ है, कल एक इतिहास मात्र बनकर रह जाता है। पहाड़ की अस्मिता पर वह लिखते हैं-

"लेकिन

पहाड़

किसी भी दिन

बन जाते हैं

इतिहास की सबसे बड़ी घटना

सबसे गौरवशाली पात्र।"

6. राजेश जोशी की कविता "पहाड़ (दो)" की पंक्तियां इस और संकेत करती हैं कि अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए मनुष्य ही नहीं बल्कि नदी, झरने, पहाड़ भी संघर्ष करते हैं। उनकी पंक्तियां देखिए जहां वह पहाड़ को क्रोधित अवस्था में चित्रित कर रहे हैं-

"पहाड़ सरल थे

लकड़हारों की तरह

मैंने गुस्से में नहीं देखा कभी उन्हें

लेकिन लोग कहते हैं

निर्णायक होता है पहाड़ों का गुस्सा

और स्वप्न और फूलों के लिए

वे हत्यारों पर

चट्टानों से वार करते हैं।"

7. राजेश जोशी की कविता "पत्थर (एक)" की पंक्तियां अपने अस्तित्व बोध से भरी हुई हैं तथा अपनी अस्मिता के साथ-साथ मानव की अस्मिता में उसका पक्षधर होने की बात करती है, साथ ही यह व्यंग्य भी करती हैं कि वह पत्थर इंसान की तरह कृतघ्न नहीं हैं। कविता की पंक्तियां देखी जा सकती हैं-

“हम पत्थर थे

और हमारे पास

कोई भाषा नहीं थी

जिसमें हम गा पाते आदमी के गीत

शामिल हो पाते

उसकी

बातचीत, बहसों और तकलीफ में।

लेकिन

जब-जब भी मौका आया लड़ाई का

हमने आगे बढ़कर वार किया

लड़ाई लड़ी

उसके हक की

उसके दुश्मनों के खिलाफ।

हम पत्थर थे

और अहसानफरामोश नहीं थे।"

8. लीलाधर मंडलोई की कविता "उनका होना न होना" भी प्रकृति की अस्मिता और अस्तित्व के पक्ष में चिंतित नजर आती है, जहां नदी, चिड़िया, झरने, रोते, सिसकते हुए दिखाई पड़ते हैं। कवि ने यहां प्रकृति का मार्मिक चित्र खींचा है-

"न कोई बादल अपना

नदी जो है तो यहाँ सूखती कराहती

बची-खुची चिड़ियों की बची-खुची आवाज़

अन्तिम झरनों का सिसकता शोकगीत।"

10. राष्ट्रीय एवं वैश्विक अस्मिता**-**

राष्ट्र एक सांस्कृतिक अवधारणा है, जिससे वहां के निवासी भावनात्मक रूप से जुड़े रहते हैं। भारत एक लोकतांत्रिक देश है, यहां राष्ट्रीय अस्मिता के सवाल भी उठ रहे हैं जो राष्ट्र, राष्ट्रीयता और राष्ट्रवाद के नए आयाम को परिभाषित कर रहे हैं। इस राष्ट्रीय अस्मिता पर चिंतन की आवश्यकता है, साथ ही वैश्वीकरण और भूमंडलीकरण के इस युग में भारतीय एवं अप्रवासी भारतीय वैश्विक स्तर पर अपनी अस्मिता को भी तलाश रहे हैं। ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय एवं वैश्विक अस्मिता का विमर्श यहां प्रासंगिकऔर आवश्यक हो जाता है।

1. मनमोहन की कविता "जातीय गौरव" इस और संकेत करती है कि राष्ट्र बोध और राष्ट्रीयता से भटक कर कुछ कट्टरपंथी विचारधारा के लोग विध्वंस और हिंसा को ही आत्म गौरव या जातीय गौरव

समझते हैं, जो कि एक भ्रम है, साथ ही इससे हमारी राष्ट्रीय अस्मिता मजबूत नहीं होती, बल्कि उसके खतरे उत्पन्न होने लगते हैं-

“आधी से ज़्यादा आबादी

जहाँ खून की कमी की शिकार थी

हमने वहाँ खून के खुले खेल खेले

हर बड़ा रक्तपात

एक रँगारंग राष्ट्रीय महोत्सव हुआ

हमने खूब बस्तियाँ जलाई

और खूब उजाला किया

और छत पर चढ़कर चिल्लाकर कहा

देखो, दुनिया के लोगो

देखो हमारा जातीय गौरव !"

2. भावना शेखर की कविता "कल और आज" भारत के राष्ट्रीयता बोध की ओर संकेत करती हैं कि हिंदू, मुस्लिम, सिख, इसाई आदि विभिन्न धर्मावलंबियों के बीच समन्वय, आदर, प्रेम, सद्भावना व सांस्कृतिक एकता से ही राष्ट्रीय एकता मजबूत होगी, जो आज के युग में कमतर होती जा रही है, यह चिंता का विषय है। पंक्तियां देखिए -

“याद है मुझे

अनवर चाचा का

भाइयों को गंडे-ताबीज्ज पहनाना

जन्मदिन पर रजिया मौसी का

माश का सदक़ा

सत्यनारायण की कथा में

क्रिस्टीना का बिना छलकाए चरणामृत पीना

मुहर्रम पर ग़लती से खुश होना

नई फ्रॉक पहनने की ज़िद करना

हाई-जम्प प्रतियोगिता से पहले

सोफिया की देखादेखी

सीने पर क्रॉस बनाना

आज के बच्चे कितने समझदार हैं

हम रहे निरे जाहिल उजड्ड मूर्ख

बरसों तक

भगवान और ख़ुदा को

एक समझते रहे।"

3. मनमोहन की कविता "देश हमारा" की पंक्तियां यह व्यंग्य करती हैं कि भारत अपना आत्म गौरव भूलकर कैसे विकसित देशों या महा शक्तियों के समक्ष नतमस्तक हो जाता है। ऐसा करने से राष्ट्रीय अस्मिता कमजोर होती है। हमें अन्य देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करते समय अपने राष्ट्र गौरव और राष्ट्रीय अस्मिता को भी ध्यान रखना होगा। कवि कहते हैं-

"देश हमारा कितना प्यारा

बुश की भी आँखों का तारा

डंडा उनका मूँछें अपनी

कैसा अच्छा मिला सहारा

मूँछें ऊँची रहें हमारी

डंडा ऊँचा रहे तुम्हारा"

4. अनिल जोशी की कविता "भटका हुआ भविष्य" में कवि ने राष्ट्रीय भावनाओं से दूर होती नई पीढ़ी का चित्रण किया है तथा नई पीढ़ी के अंदर राष्ट्रीय भावना विकसित कर उन्हें फिर राष्ट्रीय अस्मिता से जोड़ने की प्रेरणा दी है। ऐसी पंक्तियां हमारी राष्ट्रीय अस्मिता को प्रदर्शित करती हैं। कवि लिखता है-

"भारत उसके लिए एक पहेली है

वो भारत से ज्यादा

स्पेन के बारे में जानता है

क्योंकि स्पेन की एक लड़की

उसकी नवीनतम सहेली है

उसके जीवन का फलसफा बिल्कुल साफ है

उसके पास चंद तस्वीरों का एक कोलाज है

भोग, उपभोग, संभोग, कैरियर

इनसे जो तस्वीर बनती है

वो उसके लिए काफी है

बेकार के पचड़ों के लिए

अभी उम्र बाकी है

x x x x x

वो एक चिंगारी है, जो राख भी बन सकती है

और मशाल भी

उसे आवाज दो

उसमें ऐसा अभी भी कुछ है, जो खौलता है

तुतलाता ही सही

पर अपनी भाषा तो बोलता है

भारत की जो भाषा और संस्कृति

देवताओं को जमीन पर बुला सकती है

वो उसकी सोई हुई शिराओं को भी

जगा सकती है"

5. डॉ निखिल कौशिक की कविता "तुम लंदन आना चाहते हो " कविता में कवि बतलाना चाहता है कि हमारी पहली पहचान हमारे राष्ट्र या देश से है। यदि इस पहचान को अनदेखा करते हुए हम सीधे वैश्विक पहचान निर्मित करने का प्रयास करेंगे तो हमारी अस्मिता न राष्ट्रीय बच रहेगी, और न ही वैश्विक बन सकेगी। वैश्विक स्वीकृति के लिए भी राष्ट्रीय अस्मिता का होना आवश्यक प्रतीत होता है। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वैश्विक अस्मिता के लिए भी संघर्ष जारी है। कविता की पंक्तियां देखिए-

"मेरे मित्र

तुमने लिखा है-

कि तुम लंदन आना चाहते हो

मेरी सलाह मांगी है तुमने

अब मैं तुमसे क्या कहूं...

बस इतना कि तुम यहां मत आना

क्योंकि ये देश बहुत अच्छा है

यहां का सर्द मौसम तुम्हें भला लगेगा

बर्फ से ढकी कुछ राहों में

तुम्हारा खो जाना बहुत सरल होगा

x x x x x

न तुम यहां स्वीकारे जाओगे

न वहां

जिस जमीन से तुम उकता रहे हो मेरे मित्र

मेरी सलाह मानो

वहीं पर टिके रहो

दो-चार मौसम और सह चुकने के बाद

तुम वहीं अच्छी तरह पनपने लगोगे।"

6. चमन लाल 'चमन' की कविता (गीत) में राष्ट्रीयता की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है तथा वे भारत के उज्जवल भविष्य की कामना कर रहे हैं। यह पंक्तियां राष्ट्रीय अस्तित्व और अस्मिता बोध से आलोकित है-

“भारत अपनी आन जिएगा दुनिया वाले देखेंगे

सारा हिन्दुस्तान जिएगा दुनिया वाले देखेंगे।

x x x x

हमने अपने काबे से हैं बुत उठवाए वर्षों से,

इक संगत, इक पंगत में सब लोग बिठाए वर्षों से,

वेद-रिचाएं, गीता और कुर्रान पढ़ाए वर्षों से,

सब धर्मों की शान जिएगा दुनिया वाले देखेंगे।

सारा हिन्दुस्तान जियेगा..."

7. तेजेन्द्र शर्मा की कविता "पासपोर्ट का रंग " कविता में अप्रवासीय भारतीय (जो कि वैश्विक नागरिक हैं) के भीतर वैश्विकता के साथ-साथ राष्ट्रीय अस्मिता के जीवंत होने का चित्रण है। वे भीतर से भारतीय और बाहर से वैश्विक अस्मिताबोध में जी रहे हैं। पंक्तियां देखें-

“मेरा पासपोर्ट नीले से लाल हो गया है

मेरे व्यक्तित्व का एक हिस्सा

जैसे कहीं खो गया है।

मेरी चमड़ी का रंग आज भी वही है

मेरे सीने में वही दिल धड़कता है

जन-गण-मन की आवाज, आज भी

कर देती है मुझे सावधान!

और मैं, आराम से, एक बार फिर

बैठ जाता हूं, सोचना जैसे टल जाता है

कि पासपोर्ट का रंग कैसे बदल जाता है।"

11. ग्रामीण और क्षेत्रीय अस्मिता**-**

मनुष्य की पहचान अपने गांव, शहर, मजरा, टोला, क्षेत्र से जुड़ी होती है, वह इस ग्रामीण और क्षेत्रीय पहचान को जीवित रखना चाहता है। शहरों ने जिस तरह गांव को निगल लिया है अथवा वैश्विकताबोध ने स्थानीयताबोध को ढकने का काम किया है, उससे ग्रामीण अस्मिता बोध व क्षेत्रीय अस्मिता बोध की स्थिति निर्मित हुई है। मनुष्य चाहे कहीं भी रहे, वह अपने भीतर अपने गांव, घर, क्षेत्र की अस्मिता को साथ लिए जीता है। आज की कविता ग्रामीण एवं क्षेत्रीय अस्मिता को स्पष्ट रूप से चित्रित करती है।

1. लीलाधर जगूड़ी की कविता "मुक्तियात्रा" में कवि नगरीकरण, औद्योगिकरण और भूमंडलीकरण के दुष्प्रभावों से गांव और क्षेत्र को बचाने की बात करता है। इस कविता में कवि राजधानी से अपने गांव को वापस छुड़ाकर लाने का जिक्र करता है-

"ड्राईवर !

हम हैं तुम्हारे गाँव के लोग

जागो

ड्राइवर !

देखो, चीजों में अब भी स्वाद है

हमारे पास रोटी और साग है

खाओगे ?

कुएँ का जल है; पियोगे ?

- कहाँ जाना है ?

ड्राइवर !

हमें राजधानी से अपना गाँव

छुड़ाकर लाना है।"

2. दिनेश कुशवाह की कविता "हुसैन बाबा" में कवि ने संकेत किया है कि देश के बाहर सुविधा संपन्न शहरों और विकसित सभ्यताओं के बीच भी हमारे गांव, शहर, क्षेत्र अक्सर याद आते हैं, यही स्थानीयता बोध हमारी क्षेत्रीय अस्मिता को जीवंत रखती है-

"यहाँ पानी पीते हुए

अक्सर याद आती रहीं गंगा-यमुना

कतर की चौड़ी सड़कों पर

इन्दौर ने कितनी बार रुलाया

रंगों में याद आते वृन्दावन-मधुवन

बार-बार खिंचता था, दिल्ली, मुम्बई और

बनारस की गलियों का रोमांच ।"

3. क्षेत्रीय और ग्रामीण अस्मिता के क्रम मेंआदिवासी कवियत्री जसिंता केरकेट्टा ने भी अपनी कविता "ओ शहर" में, गांव को उजाड़ कर शहर बनाने की विकास प्रक्रिया पर सवाल खड़े किए हैं। वह लिखती हैं-

"भागते हुए छोड़कर अपना घर

पुआल मिट्टी और खपरे

पूछते हैं अक्सर

ओ शहर !

क्या तुम कभी उजड़ते हो

किसी विकास के नाम पर ?"

12. दलित अस्मिता**-**

वरिष्ठ दलित साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी पुस्तक दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र (पृ. 13) में लिखा है- "दलित शब्द का अर्थ है जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित है, शोषित, सताया हुआ, गिरा हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, पस्त-हिम्मत, हतोत्साहित आदि।" पर आज 'दलित' शब्द खास अनुसूचित जाति वर्ग हेतु रूढ़ हो गया है। आज भी समाज का यह निम्न तबका सामाजिक भेदभाव, अपमान, तिरस्कार, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, शोषण की मार झेल रहा है। जाति के आधार पर विषमता से कुचला गया यह वर्ग वर्ण-व्यवस्था से रहित समतामूलक समाज चाहता है।

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता "बस्स बहुत हो चुका" में कवि हजारों वर्षों से मजबूरन जाति आधारित कर्म करने की पीड़ा का जिक्र करते हैं कि किस तरह अमानवीय परंपराओं व अस्वच्छ पैतृक धंधे में लगना पड़ता है । लेकिन अब और नहीं, बस अब बहुत हो चुका। जाति आधारित अपमानजनक और अमानवीय परंपराओं को अब नहीं ढोएंगे, बल्कि अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए आवश्यकता पड़ने पर पत्थर उठाने के लिए भी तैयार रहेंगे। ऐसी भावना से रचित यह स्वाभिमान से भरी मार्मिक पंक्तियां समक्ष है-

"जब भी देखता हूँ मैं

झाड़ू या गंदगी से भरी बाल्टी- कनस्तर

किसी हाथ में

मेरी रगो में

दहकने लगते हैं

यातनाओं के कई हजार वर्ष एक साथ

जो फैले हैं इस धरती पर

ठंडे रेतकणों की तरह।

x x x x

गहरी पथरीली नदी में

असंख्य मूक पीड़ाएं

कसमसा रही हैं

मुखर होने के लिए रोष से भरी हुई।

बस्स !

बहुत हो चुका

चुप रहना

निरर्थक एड़े पत्थर

अब काम आएंगे संतप्त जनों के !"

2. "हमारे गाँव में " नामक कविता में मलखान सिंह ने जाति के आधार पर होने वाले भेदभाव, छुआछूत का चित्रण किया है, जो कि भारतीय समाज की एक सच्चाई है। आजादी के 75 वर्षों बाद भी देश इस जातिगत भेदभाव की सामाजिक गुलामी से मुक्त नहीं हो सका है। कवि की पंक्तियां इसका साक्षात दृश्य हमारे समक्ष उपस्थित कर देती हैं-

"हमारे गाँव में भी

कुछ हरि होते हैं

कुछ जन होते हैं

जी हरि होते हैं

वह जन के साथ

न उठते हैं

न बैठते हैं

न खाते हैं

न पीते हैं

यहाँ तक कि जन की

परछाई तक से परहेज करते हैं।"

3. भारतीय समाज में पतन का मुख्य कारण सामाजिक असमानता और जातिगत भेदभाव है, जिसका मूल आधार है जाति। इस जाति व्यवस्था पर बुद्ध, सिद्ध, नाथ, कबीर, नानक, रविदास एवं तमाम मध्यकालीन

संतों तथा ज्योतिबा फुले, डॉ भीमराव अंबेडकर आदि महापुरुषों ने मजबूत चोट करते हुए जाति के उन्मूलन के लिए अथक प्रयास किए, परंतु आज तक यह जाति व्यवस्था समाज में मौजूद है। सारी समस्या की जड़ यही 'जाति' है। बच्चा लाल उन्मेष की कविता "जाति है की जाती नहीं" में यह व्यथा स्पष्ट है जिसमें उन्होंने जमीन, आसमान, घर, शमशान और सर्वत्र 'जाति' के होने का चित्रण किया है। वह लिखते हैं-

बँटे हों जहाँ श्मशान तक,

ज़मीन-ओ-आसमान तक

जहाँ घड़े कुढ़ रहे घड़ों से,

वो एक देश की माटी नहीं।

जाति है कि जाती नहीं..".

4. बच्चा लाल 'उन्मेष' की कविता "कौन जात हो भाई" में उन्होंने स्पष्ट किया है कि भारतीय समाज व्यवस्था का मूल आधार 'जाति' है इसी को केंद्र में रखकर सब व्यवहार किए जाते हैं। यहां मनुष्य की पहचान उसकी 'जाति' से होती है, उसके गुण, कर्म, योग्यता से नहीं। जाति की मार झेलते हुए व्यक्ति का स्वर इन पंक्तियों में दिखाई देता है-

"कौन जात हो भाई?

"दलित हैं साब!"

नहीं मतलब किसमें आते हो?

आपकी गाली में आते हैं

गंदी नाली में आते हैं

और अलग की हुई थाली में आते हैं साब!

मुझे लगा हिंदू में आते हो!

आता हूँ न साब! पर आपके चुनाव में।"

13. आदिवासी अस्मिता**-**

शहरों, नगरों व मुख्यधारा की तथाकथित आधुनिक सभ्यता से दूर वनों, पर्वतों, ग्रामों में, प्रकृति के आश्रय में रहकर, सहज जीवन जीने वाले, आदिम समुदाय के लोग आदिवासी कहलाते हैं, जिन्हें भारत के संविधान में 'अनुसूचित जनजाति, कहा गया है। भारतीय समाज की मुख्य धारा उनके प्रति सौतेला व्यवहार करती रही है, इनके भूमि व संसाधनों पर कब्जा कर लेना चाहती है। इन्हीं सबका परिणाम है कि अनेक जनजातीय समुदाय आज विलुप्त होने के कगार पर हैं। भारतीय समाज के एक प्रमुख अंग, 'आदिवासी समुदाय' का अस्तित्व और अस्मिता मूलक साहित्य आज हमारे समक्ष स्पष्ट रूप से अपनी आवाज बुलंद कर रहा है।

1. अनुज लुगुन की कविता "अघोषित उलगुलान" हमें बताती है कि जल, जंगल, जमीन, व जनजातियों के उजड़ने पर, उनके विस्थापन, हत्या, शोषण पर, कोई नहीं बोलता। लेकिन उनके आरक्षण और धर्मांतरण को

मुद्दा बनाकर उन्हें प्रताड़ित जरूर किया जाता है। भेदभाव की चक्की में पिसते हुए आदिवासी की पीड़ा, कविता की पंक्तियों में दिखाई देती है-

“कोई नहीं बोलता इनके हालात पर

कोई नहीं बोलता जंगलों के कटने पर

पहाड़ों के टूटने पर

नदियों के सूखने पर

ट्रेन की पटरी पर पड़ी

तुरिया की लावारिस लाश पर

कोई कुछ नहीं बोलता

बोलते हैं बोलने वाले

केवल सियासत की गलियों में

आरक्षण के नाम पर

बोलते हैं लोग केवल

उनके धर्मांतरण पर

चिंता है उन्हें

उनके 'हिंदू' या 'ईसाई' हो जाने की

यह चिंता नहीं कि

रोज़ कंक्रीट के ओखल में

पिसते हैं उनके तलवे

और लोहे की ढेंकी में

कूटती है उनकी आत्मा"

2. संस्कृति के मूल आधार मातृभाषा से निर्मित होते हैं । संस्कृति को नष्ट करने वाले, पहले मातृभाषा को नष्ट करते हैं। जसिंता केरकेट्टा की कविता "मातृभाषा की मौत" यह संकेत देती है कि आदिवासी संस्कृति को नष्ट करने के क्रम में उसकी मातृभाषा को गला घोटकर मार डाला जाता है और भोला- भाला आदिवासी इस षड्यंत्र को समझ नहीं पाता, ऐसे षडयंत्रों से वह आज भी अनभिज्ञ है-

"माँ के मुँह में ही

मातृभाषा को क़ैद कर दिया गया

और बच्चे

उसकी रिहाई की माँग करते-करते

बड़े हो गए।

मातृभाषा ख़ुद नहीं मरी थी

उसे मारा गया था

पर, माँ यह कभी न जान सकी।"

3. शिक्षा एवं जागरूकता के माध्यम से आज आदिवासी अपने ऊपर होने वाले तमाम जुल्म, ज्यादती, शोषण को खूब समझते हैं। आज उनके हाथों में कलम है, तो वह खुलकर इस पर लिख रहे हैं। मुख्य धारा का साहित्य इन्हें आज भी साहित्य नहीं मानता, पर आदिवासी कविता मजबूती सेअपने अस्तित्व और अस्मिता की आवाज बुलंद कर रही है, साथ ही वह शोषण तंत्र के समक्ष गंभीर सवाल भी खड़े कर रही है। जसिंता केरकेट्टा की कविता "साहेब! कैसे करोगे खारिज" की पंक्तियां देखिए-

“साहेब!

एक दिन

जंगल की कोई लड़की

कर देगी तुम्हारी व्याख्याओं को

अपने सच से नंगा,

लिख देगी अपनी कविता में

कैसे तुम्हारे जंगल के रखवालों ने

तलाशी के नाम पर

खींचे उसके कपड़े,

कैसे दरवाज़े तोड़कर

घुस आती है

तुम्हारी फ़ौज उनके घरों में,

कैसे बच्चे थामने लगते हैं

गुल्ली-डंडे की जगह बंदूक़ें

और कैसे भर आता है

उसके कलेजे में बारूद।

साहेब!

एक दिन

जंगल की हर लड़की

लिखेगी कविता

क्या कहकर ख़ारिज करोगे उन्हें?

क्या कहोगे साहेब?

यही न

कि यह कविता नहीं

समाचार है!"

4. तथाकथित मुख्य धारा का समाज आदिवासी समुदाय को एक तरफ तो नापसंद करता है, उनका शोषण व अपमान भी करता है, पर दूसरी ओर आदिवासी समुदाय की उपज, संस्कृति और देह का उपयोग करने लालायित भी रहता है। मुख्य धारा के समाज का यह दोहरा मापदंड दलित, आदिवासी, स्त्री अस्मिता के साथ शुरू से ही रहा है। निर्मला पुतुल की कविता "मेरा सबकुछ अप्रिय है उनकी नजर में" इसी और इशारा करती है कि मानवता के तल पर 'नकार' और उपभोग के तल पर 'स्वीकार' का दोहरा व्यवहार आदिवासियों के साथ है। वे लिखती हैं-

"वे घृणा करते हैं हमसे

हमारे कालेपन से

हँसते हैं, व्यंग्य करते हैं हम पर

हमारे अनगढ़पन पर कसते हैं फब्तियाँ

मज़ाक़ उड़ाते हैं हमारी भाषा का

हमारे चाल-चलन रीति-रिवाज

कुछ पसंद नहीं उन्हें

पसंद नहीं है, हमारा पहनावा-ओढ़ावा

जंगली, असभ्य, पिछड़ा कह

हिक़ारत से देखते हैं हमें

और अपने को सभ्य श्रेष्ठ समझ

नकारते हैं हमारी चीज़ों को

x x x x

मेरा सब कुछ अप्रिय है उनकी नज़र में

प्रिय है तो बस

मेरे पसीने से पुष्ट हुए अनाज के दाने

जंगल के फूल, फल, लकड़ियाँ

खेतों में उगी सब्ज़ियाँ

घर की मुर्ग़ियाँ

उन्हें प्रिय है

मेरी गदराई देह

मेरा मांस प्रिय है उन्हें!"

14. स्त्री अस्मिता**-**

समूचे विश्व की आधी आबादी स्त्री है, वहअनेक रूपों में हमारे सामने आती है। स्त्री के बिना मानव जीवन की परिकल्पना ही नहीं की जा सकती। सैकड़ो वर्षों से पूरी दुनिया में धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक रूप से, स्त्री का शोषण किया जाता रहा है, साथ ही उसे वस्तु या देह समझकर उसका यौन शोषण विभिन्न देश काल में होता रहा है। स्त्री कमोबेशआज भी वस्तु या मांस के रूप में देखी जाती है। इसी परिप्रेक्ष्य में यह उल्लेखनीय है कि समूचे विश्व में नारीवाद की अवधारणा है, अनेक स्त्री आंदोलन हुए हैं। भारतीय एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्त्री की अस्मिता को लेकर चर्चा जोरों पर है। 21वीं सदी में यह दुखद पहलू हमारे समक्ष उपस्थित होता है कि आज भीड़ बलात्कारियों को बचाने के लिए उनके पक्ष में भी खड़ी नजर आती है, यह अत्यंत चिंतनीय एवं विचारणीय पक्ष है। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, लैंगिक शोषण से गुजरती स्त्रियां अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए संघर्षरत है। हिंदी में स्त्री अस्मिता को लेकर पिछली सदी से इस सदी तक उत्कृष्ट रचनाएं लिखी गई हैं और और लिखी जा रही हैं।

1. अरूण कमल की "ऐसा क्यों हो रहा है" शीर्षक कविता में कवि समाज के उस नकारापन पर सवाल खड़े करता है कि सार्वजनिक रूप से किसी स्त्री की इज्जत जा रही है और मनुष्य की संवेदना कितनी मर गई है, कि कोई उसे बचाने तक तक नहीं आ रहा। कवि कविता के माध्यम से यह सवाल उठाता है कि आखिर ऐसा क्यों हो रहा है? वे लिखते हैं-

"सामने सड़क पर एक औरत की इज्जत जा रही है

और लोग अपने अपने ओटों पर खडे हैं चुपचाप

ऐसा क्यों हो रहा है?

XXXXX

पेड़ को पत्थर बनने में लगा है हजार वर्ष

आदमी देखते देखते पत्थर बन रहा है

ऐसा क्यों, आखिर क्यों हो रहा है, ऐसा क्यों हो रहा है?'

2. इन्दु जैन की कविता "युद्ध में औरत" में कवियत्री ने इस पीड़ा का मार्मिक चित्रण किया है कि स्त्री को उसकी गरिमा में, एक व्यक्ति के रूप में क्यों नहीं देखा जाता? समाज उसे सिर्फ देह अथवा शरीर की दृष्टि से ही क्यों देखता है ? वह कहती हैं-

“मैं जहाँ जब भी जाऊँगी

औरत की देह में रहूँगी

समझने लगी थी कि

अब मेरी उम्र मेरा कवच है

लेकिन अखबारों ने बताया

कि औरत की उम्र सिर्फ उसकी देह होती है

वह गर्भवती हो, बच्ची, अधेड़ या बूढ़ी

इस्तेमाल की चीज़ रहती है।"

3. अनामिका की कविता "स्त्रियां" इस और संकेत करती हैं कि स्त्री समुदाय उपेक्षित है, उन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है, उन्हें स्वस्थ और नवीन दृष्टिकोण से देखने की जरूरत है। अनामिका लिखती है-

"पढ़ा गया हमको

जैसे पढ़ा जाता है कागज

बच्चों की फटी कापियों का

चनाजोर गर्म के लिफाफे बनाने के पहले

x x x x

भोगा गया हमको

बहुत दूर के रिश्तेदारों के दुख की तरह

एक दिन हमने कहा हम भी इंसान है-

हमें कायदे से पढ़ो एक-एक अक्षर

जैसे पढ़ा होगा बी. ए. के बाद

नौकरी का पहला विज्ञापन

देखो तो ऐसे

जैसे कि ठिठुरते हुए देखी जाती है

बहुत दूर जलती हुई आग।"

4. कुसुम जैन की कविता "निर्वासित" यह बताती है कि सदियां बीत गई मुझ स्त्री को भटकते हुए, पर मेरी पहचान सिर्फ 'योनि' के रूप में की गई। मैं 'स्त्री व्यक्तित्व' से निर्वासित होकर शरीर का एकमात्र अंग 'योनि' बना दी गई हूं। यह स्त्री की पहचान का मूलप्रश्न है, इसमें उसके अस्तित्व और अस्मिता का संकट है। पंक्तियां देखिए-

"निर्वासित हूँ

मैं

अपने आप से

भटक रही हूं

एक सदी से

दूसरी सदी में

बन कर

योनि।"

5. स्त्री अपने स्वतंत्र पहचान के साथ जी नहीं पाती, बल्कि रिश्तो की परछाई के रूप में पहचानी जाती है। इससे उसका आत्मगौरव, आत्मसम्मान, अस्तित्व और अस्मिता सब दरकिनार हो जाता है। वह इस आरोपित नियतिवाद का प्रतिवाद करती है। कुसुम जैन की कविता "नियति" में इसी बात का चित्रण दिखाई देता है-

“बहाव के साथ-साथ

बहते चले जाना ही

नियति है औरत की

रिश्तों दर रिश्तों में बँट

विभिन्न सम्बोधनों

के साये में जीती

स्वयं बन जाती है

बस एक परछाई

भूल जाती है

अपनी अस्मिता

अपना सम्मान"

6. स्त्रियों को धर्म शास्त्रों की आड़ में गुलाम बनाकर रखा गया, धर्म का पालन उनका कर्तव्य निर्धारित किया गया। दुनिया के अधिकांश धर्मो ने कमोबेश स्त्री की शोषण के मूल आधार का काम किया है। स्त्री शोषण के मूल आधारों में धर्मशास्त्र और धार्मिक कानून अग्र पंक्ति मेंआते हैं, जिसका विरोध आज की स्त्री कविता करती है। कुसुम जैन की कविता "हमारा धरम है" में भी इसी बात का चित्रण है-

“आप कहते हैं

शास्त्रों-पुराणों में

जो लिखा है

हम उसे मानें

वही 'हमारा धरम' है

आप ऐसा कहते रहेंगे

इसलिए कि 'हमारा यह धरम'

आपको यह अधिकार देता है

कि आप हमें हमारे

अधिकारों से बेदखल कर दें"

7. सुशीला टाकभौरे की कविता "स्त्री" स्त्री के मनोवैज्ञानिक पक्ष को दर्शाती है कि स्त्री कुछ भी बन जाए पर सदा भयभीत रहती है कि कोई है जो सदा उस पर नजर रखे हुए हैं। वह कभी भी, कहीं भी, स्वतंत्र नहीं है, बल्कि उस पर हमेशा निगरानी की जा रही है। कविता की पंक्तियां देखिए-

“एक स्त्री

जब भी कोई कोशिश करती है

लिखने की बोलने की समझने की

सदा भयभीत-सी रहती है

मानो पहरेदारी करता हुआ

कोई सिर पर सवार हो

पहरेदार

जैसे एक मजदूर औरत के लिए

ठेकेदार

या खरीदी संपत्ति के लिए

चौकीदार।”

15. विकलांग **(**दिव्यांग**)** अस्मिता**-**

समाज में शारीरिक और मानसिक रूप से अक्षम, अपूर्ण विकलांग (या दिव्यांग) समुदाय भी हैं, जो सदियों से उपेक्षा और अपमान का जीवन जी रहा है। जन्म से ही अथवा किसी बीमारी या गंभीर दुर्घटना के कारण भी विकलांगता आ जाती है। मुख्य धारा का समाज विकलांग समुदाय के प्रति अच्छी भावना नहीं रखता, जिसके कारण उनके अंदर हीन भावना बैठ जाती है तथा वे स्वयं को उपेक्षित और अपमानित महसूस करते हैं। उनके समक्ष जीवन यापनका संकट होता है। विकलांग या दिव्यांग समुदाय हमसे समान आदर और प्रेम चाहते हैं।

1. अनीता भारद्वाज की कविता "विकलांग" में वे लिखती हैं कि विकलांग दया और सहानुभूति नहीं चाहते, बल्कि प्यार और अधिकार चाहते हैं। उनकी कविता देखिए-

“हाथों की उंगलियां भी नहीं होती एक जैसी,

तो क्या हम उन्हें काट देते है,

जिस इंसान को ईश्वर ने नहीं बनाया दूसरों जैसा,

फिर क्यूं हम उन्हें अलग छांट देते हैं।

विकलांग कहा कभी, कभी दिव्यांग कह दिया

समाज का अंग नहीं समझा कभी,

तो शब्द बदलने से होगा क्या?

तुम्हारी सहानुभूति नहीं, बस

अपने हिस्से का संसार चाहिए,

मैं भी घूम सकूं, हँस सकूं, खेल सकूं, पढ़ सकूं, जी सकूं,

अपनी विशेष आवश्यकता के अनुरूप मिले मुझे भी संसाधन

बस इतना सा अधिकार चाहिए।

मुझे शब्दों से मत बहलाओ,

मुझे समाज का अंग समझकर प्यार चाहिए।”

2. प्रफुल्ल कुमार त्रिपाठी की कविता "एक नई पहचान" में भी विकलांग अथवा दिव्यांग जीवन का कड़वा दर्द है, जो सामाजिक व्यवहार पर गंभीर सवाल खड़े करता है। कविता की पंक्तियां देखिए-

"क्या विकलांग नहीं हुआ करते इंसान ?

फिर क्यों लोग खाते हैं उन पर तरस ?

फेंकते हैं व्यंग्यों के बाण !

भगवान् कभी मत करो किसी को विकलांग।

क्योंकि, ये जो तुमने बनाए हैं इन्सान,

वे उनकी अपूर्णता पर हंसते हैं।

तरस खाकर उनकी उपेक्षा भी करते हैं,

और तब वे अपने दर्द, व्यथा का ग्राफ चढ़ा पाते हैं।

इनकी विकलांगता बन जाती है अभिशाप,

शारीरिक पूर्णता ही अक्सर

होती है व्यक्तित्व की छाप।

लेकिन यदि वे एक आधा अधूरा इन्सान हैं,

तो वह ढेर सारा तबका किनका है,

जो हैं मन, विचार और कर्म से विकलांग ?"

3. गरिमा कंसकर की कविता "विकलांग का दर्द" विकलांगों या दिव्यांगों केआत्मनिर्भर होने की ललक को चित्रित करती हैं, वह पराधीन नहीं स्वाधीन होना चाहते हैं, आत्मनिर्भर जीवन बिताना चाहते हैं और एक आम आदमी की तरह अपने जीवन को अपने अनुसार जीना चाहते हैं-

"मैं आम इंसानो की तरह

अपने पैरो पर

नहीं चल सकती

फिर भी मैं तन से

नहीं

मन से

अपने पैरों में खड़ा होना

चाहती हूँ

मैं किसी पे बोझ

नही बनना चाहती

अपना बोझ

खुद उठाना चाहती हूँ"

16. किन्नर **(**थर्ड जेंडर**)** अस्मिता**-**

पूरी दुनिया में जेंडर आज एक संवेदनशील विषय है। स्त्री व पुरुष के अलावा तृतीय लिंग अर्थात किन्नर समाज की मौजूदगी प्राचीन काल से रही है। लेकिन उन्हें सदा उपेक्षित व अपमानित जीवन बिताना पड़ रहा है। आज लिंग की अवधारणा जेंडर के रूप में व्यापक हो गई है, जिसमें तृतीय लिंग के साथ ही एलजीबीटी की अवधारणा भी समाज में उपस्थित हो गई है। तृतीय लिंग या थर्ड जेंडर के लोग आज अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए संघर्षरत है। वे सामाजिक व पारिवारिक रूप से बहिष्कृत जैसा जीवन जी रहे हैं। वे अपनी स्वीकार्यता, प्रेम और सम्मान चाहते हैं, उपेक्षा, तिरस्कार व परित्याग नहीं। हिंदी कविताओं में किन्नर या थर्ड जेंडर की अस्मिता पर चर्चा सार्थक दिशा मेंआगे बढ़ रही है।

1. ओमप्रकाश अत्रि की कविता "किन्नर हूं" मैं किन्नर जीवन की पीड़ा को अभिव्यक्त किया गया है। वे कहते हैं कि हम भी एक सामान्य मानव की तरह इंसान है और हमें भी एक सामान्य मनुष्य की तरह जीने का हक मिलना चाहिए। सामाजिक अपमान और तिरस्कार से उनका मन अत्यंत आहत है, वह सवाल करते हैं कि वे स्वेच्छा से किन्नर नहीं बने, बल्कि ईश्वर ने ही जन्म से उन्हें ऐसा बनाया है, इसमें उनका क्या दोष? कविता की पंक्तियां देखिए-

"तुम्हारी तरह

मै भी लिया हूं जन्म

माँ की कोंख से

मुझे भी जनते समय

माँ ने सहा है

असहय दर्द की व्यथा

तुम्हारी तरह

मुझे भी मिली है

माँ के आंचल की छांव।

फिर भी मैं

तुमसे अलग हूं

इसलिए कि

ईश्वर ने दे दी है

मुझे किन्नर की छाप ,

हाँ ! मैं किन्नर हूं"

2. सपना मांगलिक की कविता "किन्नर पर काव्य : हिजड़े की व्यथा" मैं तृतीय लिंगी व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत भी तिरस्कार, उपेक्षा, अपमान की पीड़ा का मार्मिक चित्रण किया गया है, जिसमें किन्नर को मृत्यु के बाद भी जूते चप्पल से मारने जैसी अमानवीय प्रथा का उल्लेख मिलता है। किन्नर अस्मिता की कविताएं सामाजिक व्यवस्था एवं सामाजिक मानसिकता पर गंभीर सवाल खड़े करती है। कविता की पंक्तियां अवलोकनीय है-

"लिंग त्रुटि क्या दोष मां मेरा, काहे फिर तू रूठी

फेंक दिया दलदल में लाकर, ममता तेरी झूठी।

मेरे हक, खुशियां सब सपने, मांग रहा हूं कबसे

छीन लिया इंसा का दर्जा, दुआ मांगते मुझसे।

सब किस्मत का लेखा जोखा, कर्म प्रभाव तभी तो

मैं अपने दुःख पर लेकिन तुम, मुझ पर ताली पीटो।

मित्र, बच्चे, घरबार न मेरा कोई जीवन साथी

बस्ता, कॉपी न नौकरी बस, ताली साथ निभाती।

बचकर निकलो इधर न गुजरो, वो जा रहा हिंजड़ा,

केश घसीट पुलिस ले जाती, जैसे स्वान पिंजरा।

तुम सम ही सपने हैं मेरे, मैं भी ब्याह रचाऊं

लाल जोड़ा, नाक में नथनी, कुमकुम मांग सजाऊं।

बन प्रति वर्ष अरावन दुल्हन, कैसे मैं इठलाती,

दिन सोलह सुहागन अभागी, विधवा फिर हो जाती।

है तन अधूरा मन अधूरा, ना कुछ मुझमें पूरा

ताली गाली लगती, फिर भी जलता इससे चूल्हा।

जितना श्रापित मेरा जीवन, दुखद अधिक मर जाना,

जूते चप्पल मार लाश को, कहते लौट न आना।"

17. युवा अस्मिता**-**

युवा समाज की 'रीढ़' हैं। भारत में सर्वाधिक जनसंख्या युवा वर्ग की है। युवा सिर्फ शरीर के तल पर जोश से भरे होना नहीं है, बल्कि मानसिक तल पर भी आधुनिकता बोध से परिपूर्ण होना युवा है, जो नवीन, स्वतंत्र चिंतन के साथ आता है। परंतु भारतीय समाज युवा को स्वतंत्रता और नेतृत्व देने के 'मूड' में दिखाई नहीं देता। समाज, राजनीति, धर्म, परंपरा सभी युवाओं की शक्ति की प्रशंसा करते हैं, लेकिन उस पर वर्जनाओं के बंधन आरोपित कर उसे अपने नियंत्रण में करने का प्रयास किए रहते हैं। आज के युवा अपने करियर, विवाह, प्रेम संबंध सभी क्षेत्रों में वर्जनारहित जीवन चाहते हैं, वे अपने अस्तित्व और अस्मिता बोध से भरे हुए हैं तथा स्वयं नेतृत्व करना चाहते हैं,उनके इस युवापन को बनाए रखना और बचाए रखना अत्यंत आवश्यक है।

1. शशि प्रकाश की कविता "अगर तुम युवा हो " मे युवाओं को व्यवस्था परिवर्तन हेतु क्रांति के लिएआह्वान किया गया है। कवि लिखता है कि यदि तुम्हें इस नर्क से बाहर निकलना है तो स्वयं अपनी आवाज बुलंद करते हुए आगे बढ़ने की दिशा में बंद दरवाजा तोड़ना होगा। यह कविता युवाओं को प्रेरित करते हुए उन्हें अस्मिता बोध से भर देती है। पंक्तियां देखिए-

"ग़रीबों-मज़लूमों के नौजवान सपूतो!

उन्हें कहने दो कि क्रांतियाँ भर गईं

जिनका स्वर्ग है इसी व्यवस्था के भीतर।

तुम्हें तो इस नर्क से बाहर

निकलने के लिए

बंद दरवाज़ों को तोड़ना ही होगा,

आवाज़ उठानी ही होगी

इस निज़ामे-कोहना के ख़िलाफ़।

यदि तुम चाहते हो

आज़ादी, न्याय, सच्चाई, स्वाभिमान

और सुंदरता से भरी ज़िंदगी

तो तुम्हें उठाना ही होगा

नए इंक़लाब का परचम फिर से।”

2. आलोक धन्वा की कविता "युवा भारत का स्वागत" मे युवाओं के प्रतिकूल एवं गलाकाट प्रतिस्पर्धाजनित वातावरण में भी, युवाओं के अपने अस्तित्व और अस्मिता को बनाए रखने की प्रशंसा की गई है, देखिए-

“कितना लंबा गलियारा है

क्रूरताओं का

जिसे पार करते हुए ये युवा

पहुँच रहे हैं पढ़ाई-लिखाई के बीच

दाख़िले के लिए लंबी क़तारें लगी हैं

विश्वविद्यालयों में

यह कोई साधारण बात नहीं है

आज के समय में

वे जीवन को जारी रख रहे हैं

एक असंभव होते जा रहे

गणराज्य के विचार

उनसे विचलित है"

3. पल्लवी विनोद की कविता "युवा होता बेटा" में उत्तर आधुनिक समय में रिश्तों के नए युग का चित्रण है, जिसमें युवा सभी रिश्तों को समान आदर व मित्रवत संबंध के रूप में पुनर्सृजित कर रहा है। एक मां और उसके पुत्र के बीच संवादों के माध्यम से नवीन युवादृष्टि का चित्रण किया गया है, जो यह बतलाता है कि उत्तर आधुनिक युवा सारी वर्जनाओं से मुक्त होकर, स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में रिश्तो को देखता है। कविता की पंक्तियां देखिए-

"युवा होता बेटा पूछता है

तुम्हारा पहला क्रश क्या मुझसे अधिक सुंदर था

मैं मुस्कुराकर उसकी तरफ़ देखती हूँ

वात्सल्य में डूबी मैं जब तक कहती : 'नहीं'

मुझे उसकी आँखों में एक पुरुष का औत्सुक्य दिखा

कुछ सोचकर कहती हूँ :

'हाँ... शायद'

वह मुस्कुराकर रह गया

'नहीं' कहकर मातृत्व की परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाती

फिर चूक जाती उसे ऐसा पुरुष बनाने से

जो प्रेमिका या साथी के क्रश या एक्स से

अपनी तुलना में आहत नहीं होगा"

18. अल्पसंख्यक अस्मिता**-**

भारत में विभिन्न धर्म-संप्रदाय के लोग निवास करते हैं, जिसमें कुछ बहुसंख्यक हैं, और कुछ की संख्या कम है जिन्हें अल्पसंख्यक धार्मिक समुदाय कहा जाता है। धार्मिक मान्यताएं एवं सांस्कृतिक विभेद के कारण विभिन्न संप्रदायों के बीच मतभेद व टकराव भी होते रहते हैं। समय-समय पर ऐसे स्वर उभर कर सामने आते हैं कि अल्पसंख्यक समुदाय अपने अस्तित्व पर संकट महसूस करते हैं व भयभीत रहते हैं तथा अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करते हैं। बौद्ध, जैन, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि समुदाय भारत में अल्पसंख्यक की श्रेणी में आते हैं। मुस्लिम समुदाय भी इसी अल्पसंख्यक वर्ग के अंतर्गत शामिल है। हिंदू-मुस्लिम दंगों में धार्मिक पहचान के आधार परआक्रमण होते हैं, वहां दोनों संप्रदाय के लोग मारे जाते हैं, पर मृत्यु तो मनुष्य और मनुष्यता की होती है । यदि अल्पसंख्यक समुदायों को समुचित प्रेम, आदर और सम्मान दिया जाए तो उन्हें अपने अस्तित्व पर खतरा महसूस नहीं होगा तथा सांप्रदायिक हिंसा से मुक्ति मिल सकती है।

1. सविता सिंह की कविता “मुस्ताक मियां की दौड़” में वह चित्रित करती हैं कि अल्पसंख्यक होने के कारण मुस्ताक मियां मार दिए जाते हैं लेकिन उनके मरने से सिर्फ एक इंसान ही नहीं मरता बल्कि इंसानियत भी मर जाती है। कविता की पंक्तियां देखें-

“सो गिर पड़े मुस्ताक मियां

फिर सोचा जिन्हें इतनी प्यास है उनके खून की

वे आवे बीच सड़क पर कर ले दो हिस्से

उनके जिस्म के

लेकिन दंगाइयों की तो कुछ और ही मंशा थी

अब जिस्म को लहूलुहान करना

काटना बीच से नाकाफी था

अब तो उसे जलाकर खाक भी कर देना था

अब तक बहुत कुछ जो इसलिए जिंदा था

कि वह इंसानियत का हिस्सा था

उसे राख ही होना था

मुस्ताक मियां खाक हुए

इंसानियत भी राख हुई

और वह तलवार जिससे वह चीरे गए

अब तक सड़क पर नाच रही है

आग को बुला रही है"

2. अदनान काफिल दरवेश ने रघुवीर सहाय को याद करते हुए एक कविता लिखी है, जिसका शीर्षक है - "वरना मारे जाओगे"। इस कविता में एक भयभीतअल्पसंख्यक मुसलमान की भयभीत मानसिक स्थिति का चित्रण किया गया है, जिसमें एक मुसलमानअपने अस्तित्व की रक्षा के लिएअपनी पहचान को उजागर न होने देने का प्रयास कर रहा है, उसके सामने पहचान का संकट है। कवि लिखता है-

"राह चलते ख्याल रखो

कि तुम्हारी कमीज से

मुसलमान होने की बू तो नहीं आ रही

ख्याल रखो किसी से बहस करते हुए

कुछ बोलते हुए

कुछ करते हुए

यहां तक कि हंसते और रोते हुए भी

कि कहीं तुम मुसलमान तो नहीं लग रहे

वरना मारे जाओगे"

इस प्रकार आज की कविता में अनेक अस्मिताबोध हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं जो जीवन के विविध क्षेत्रों से, विविध वर्गों और समुदायों से जुड़े हुए हैं, जो उनके अस्तित्व और अस्मिता की आवाज बुलंद करते हुए मानवीय संवेदना का विकास करने का प्रयास कर रहे हैं।

विश्लेषण-

21वीं सदी की हिंदी कविताओं का विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य हमारे सामने आते हैं-

1. अस्मिता बोध की कविताएं गहन संवेदना से भरी हुई है।
2. अस्मिता दूसरे समूह से भिन्न होने का भाव पैदा करती है
3. अस्मिता का स्वरूप समय-समय पर परिवर्तनशील रहता है।
4. नामवर सिंह कहते हैं कि अस्मिता दया नहीं चाहती, हक अधिकार चाहती हैं।
5. अमर्त्य सेन कहते हैं कि अस्मिता या पहचान की भावना हिंसा भी करवा सकती है।
6. अस्मिता पर आया संकट व्यक्ति को विद्रोही बना देता है।
7. व्यक्तिगत या सामाजिक प्रताड़ना, उपेक्षा, अधिकारों का हनन, शोषण की घटना के विरोध में अर्थात अस्तित्व पर आए संकट से अस्मिता का संघर्ष उत्पन्न होता है।

8. विचार विमर्श करके, वंचितों को उनके अधिकार, मान सम्मान देकर तथा संतुलन स्थापित करके अस्मिता जनित संघर्षों को दूर किया जा सकता है।
9. आचार्य ओशो रजनीश ने अस्मिता बोध के चार तलों की चर्चा की है, जिसमें पहले तल- तन या शरीर का, दूसरा तल- मन अथवा विचार का, तीसरा तल- भाव अर्थात हृदय का, और चौथा तल- चेतना अर्थात आत्मा का है। अलग-अलग तलों पर एक ही व्यक्ति की अस्मिताएं अलग-अलग हो सकती हैं।
10. अस्मिता के नाम पर कई बातों की पुनरावृत्ति हो रही है, जिससे बचने की जरूरत है। वर्तमान समय और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अस्मिताबोध की कविताओं में नवीन दृष्टि को शामिल किया जाना आवश्यक है।
11. 20वीं सदी की कविताओं में स्त्री, दलित आदि अस्मिता में जो आक्रमकता, आक्रोश और प्रतिशोध भाव सघन था, वह 21वीं सदी की कविता में विरल हो गया है। हालांकि आक्रोश, प्रतिकार व प्रतिरोध का भाव अभी है तथा वेदना और संवेदना भी परिपूर्ण है।
12. आज की कविता किसी एक अस्मिता पर केंद्रित नहीं है, बल्कि जीवन के विभिन्न अस्मिताओं पर पर्याप्त मात्रा में कविताएं हिंदी भाषा में लिखी जा रही है।

निष्कर्ष-

1. जन्म से प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र है और अपने आप में एक पूर्ण इकाई है। उसके जीवन जीने में बाधा पहुंचाना, उनको गुलाम बनाना, मालकियत स्थापित करना, उनके हक और अधिकारों पर कब्जा करना न केवल अमानवीय है, बल्कि अप्राकृतिक भी है। इससे अस्तित्व का खतरा उत्पन्न होता है और अस्मिता का संघर्ष शुरू होता है।
2. अस्मिता बोध बाह्य जगत से आंतरिक जगत की ओर यात्रा है, स्थूल से सूक्ष्म, सूक्ष्म से सूक्ष्मतर की यात्रा है, दूर से पास की यात्रा है, संसार से अध्यात्म की ओर यात्रा है। अस्मिता के कमजोर पक्षों पर विरोधियों ने काफ़ी 'फोकस' किया है, लेकिन इसके सकारात्मक पक्ष को भी ठीक से देखा, समझा जाना चाहिए।
3. अस्मिताबोध में कुछ खतरे हैं पर अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाने होंगे। अस्मिता का संघर्ष आत्मबोध पर समाप्त हो सकता है, इसके पहले नहीं, और उस मंज़िल तक पहुंचने के लिए यह अस्मिता बोध या संघर्ष का रास्ता लाज़िमी है।
4. पहले से केंद्र में स्थापित एवं प्रभुत्व संपन्न व्यक्ति एवं समूहों द्वारा अपनी अस्मिता व वर्चस्व बनाए रखने हेतु शोषण के विविध तरीके ईजाद किए गए थे, जिसके विरुद्ध हाशिए का समाज वर्तमान समय में अस्मिताबोध की चेतना से गुजर रहा है।
5. कहीं-कहीं परअस्मिता के संघर्ष की अति में प्रति-अस्मिता की घटनाएं भी हो रही है, इस प्रति-अस्मिताबोध का चित्रण भी कविता में आना चाहिए।
6. यह उत्तर-आधुनिक युग उपेक्षा और अपेक्षा का युग है, जहां हर व्यक्ति अथवा समुदाय अपने आप को उपेक्षित महसूस करता है। आपसी समन्वय, आदर, प्रेम, स्वीकार्यता, प्रदान करते हुए यदि मनुष्य दूसरों के अस्तित्व में बाधा नहीं बने, तो अस्मिता विमर्श की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।
7. जिन व्यक्ति, वस्तु और समूहों को बचाया जाना जरूरी है, उसे अस्मिता बोध, अस्मिता विमर्श के माध्यम से सुरक्षित और संरक्षित करने में सहयोग प्राप्त होगा।

8. यह कहना अतिश्योक्तिपूर्ण न होगा कि इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता मूलतः अस्मिता बोध की ही कविता है। अरुण कमल, मंगलेश डबराल, चंद्रकांत देवताले, अनामिका, दिनेश कुशवाह, निर्मला पुतुल, सुशीला टाकभौरे, बच्चालाल उन्मेष, अनुज लुगुन, जसिंता केरकेट्टा, महेश वर्मा, अंकिता आनंद, गीत चतुर्वेदी, एकांत श्रीवास्तव, जितेंद्र श्रीवास्तव, राजेश जोशी, कुमार अंबुज, अरुण कमल, लीलाधर मंडलोई , मलखान सिंह सिसोदिया, सविता सिंह, अनामिका, लीलाधर जगूड़ी, कुसुम जैन, विजय कुमार संदेश, भावनाशेखर, अनिल जोशी, कुंवर नारायण आदि सैकड़ो कवि 21वीं सदी की कविताओं के लेखन में समर्पित रूप से संलग्न हैं।
9. 21वीं सदी की अस्मिता बोध की कविताएं मानवता व शाश्वत जीवन की ओर जाती हुई कविताएं हैं। यह देखने में तो विभाजनकारी लगती है, लेकिन जिस तरह चिकित्सक शरीर के अंगों की चिकित्सा भले ही कठोरतापूर्वक करता है पर शरीर को स्वस्थ करना उसका उद्देश्य होता है। इसी तरह अस्मितामूलक कविताओं का उद्देश्य समाज को संवेदनशील बनाते हुए एकजुट करना है।
10. भारतीय साहित्य से प्रभावित होकर शायद भारतीय परंपरा के इसी गुण (मानवता) की प्रशंसा कभी मैक्स मूलर ने किया था। मैक्स मूलर लिखते हैं - “यदि मुझे कोई पूछे कि हम यूरोप के रहने वालों को, जिन्हें यूनानियों, रोमनो और यहूदियों के विचारों पर लगभग पूरी तरह से पोषित किया गया है, उन्हें किस साहित्य से ऐसी सीख मिलेगी, जिसकी बहुत जरूरत है ताकि हम अपना आंतरिक जीवन अधिक पूर्ण, अधिक व्यापक, अधिक वैश्विक, वास्तव मेंअधिक मानवीय,और न सिर्फ मानवीय बल्कि एक शाश्वत जीवन बना सकने वाली सीख प्राप्त कर सकते हैं, तो मैं फिर से भारत की ओर इशारे करुंगा।”
11. वर्तमान अस्मिताबोध की कविताएं पीड़ित के पक्ष में तो खड़ी ही है, बल्किअपनी संवेदना से पूरे समाज को, राष्ट्र को, मानवता को, जोड़ने में सफल होगी, ऐसा प्रतीत होता है।

संदर्भ-सूची

1. कविता नाटक तथा अन्य कलाएं- विपिन कुमार अग्रवाल, साहित्य भवन प्रा०लि०, इलाहाबाद, 1995
2. कविता का संघर्ष- पारस कुमारेन्द्र पारस नाथ सिंह, वाणी प्रकाशन नयीं दिल्ली, 2016
3. इक्कीसवीं सदी के संकट- रामशरण जोशी, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., दरियागंज नई दिल्ली, 2003
4. उत्तर आधुनिकता, कुलीनतावाद और समकालीन कविता- अजय तिवारी, नयी किताब, दिल्ली, 2015
5. इक्कीसवीं सदी कविता और समाज- जगदीश नारायण श्रीवास्तव, अमरसत्य प्रकाशन दिल्ली, 2016
6. कविता के पते-ठिकाने - विजय कुमार, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2014
7. उत्तर-अधुनिकतावाद और विचारधारा- जगदीश्वर चतुर्वेदी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2018
8. हिन्दी काव्य चिन्तन के मूलाधार (आदिकाल से आधुनिक काल तक), योगेन्द्र प्रताप सिंह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2016
9. कविता के प्रस्थान, सुधीर रंजन सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016
10. समकालीन हिन्दी कविता परमानंद श्रीवास्तव, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली 1990
11. आधुनिक हिन्दी कविता, सं. जगदीश चतुर्वेदी, दि मॅकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, 1975
12. आधुनिकता पर पुनर्विचार- अजय तिवारी, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2012

13. कविता का शुक्ल पक्ष, सं बच्चन सिंह, अवधेश प्रधान, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 2001
14. स्त्री अस्मिता और समकालीन कविता, प्रमिला के. पी., सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, 2011
15. कविता के तीन दरवाजे : अज्ञेय, शमशेर, मुक्तिबोध- अशोक वाजपेयी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2016
16. जन कवि- विजय बहादुर सिंह, वाणी प्रकाशन, नयीं दिल्ली, 2015
17. साहित्य और समाज- रामधारी सिंह दिनकर, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008
18. हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार- संपादक अभय कुमार दुबे, कुंवारी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014
19. दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र -ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2001
20. समकालीन साहित्य विविध परिप्रेक्ष्य- प्रोफेसर संजय एल मादार, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016
21. ओम प्रकाश वाल्मीकि कृत बस्स बहुत हो चुका- रमेश कुमार, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, 2007
22. समकालीन हिंदी काव्य का स्त्री पक्ष- पूनम कुमारी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2015
23. हिंदी दलित कविता- डॉ. रजत रानी 'मीनू', नवभारत प्रकाशन, दिल्ली, 2009
24. दलित और अश्वेत साहित्य : कुछ विचार- सं. चमन लाल, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, राष्ट्रपति निवास शिमला, 2001
25. भारत हमें क्या सिखा सकता है- मैक्स मूलर, (अनुवाद- डॉ. सुरेश मिश्रा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019
26. इसी काया में मोक्ष - दिनेश कुशवाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007
27. कुछ न कुछ टकराएगा जरूर- (काव्यसंग्रह)- इन्दु जैन, भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली, 2004
28. हिंदी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचंद्र शुक्ल
29. बाघ और सुगना मुंडा की बेटी- अनुज लुगुन
30. नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द- निर्मला पुतुल
31. इतिहास में अभागे- दिनेश कुशवाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
32. कविता : दुख की नदी - कुसुम जैन, राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007
33. दो पंक्तियों के बीच- राजेश जोशी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000
34. कोई दूसरा नहीं- कुंवर नारायण, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, (चौथा संस्करण) 2011
35. कवि ने कहा- लीलाधर जगूड़ी, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
36. आब्नूसी ख्याल- ऐन राशिद खान (लिपि अंतरण-अजहर आलम, उमा झुनझुनवाला), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
37. जिल्लत की रोटी- मनमोहन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
38. अग्नि शिखा- डॉ. शत्रुघ्न कुमार, नवभारत प्रकाशन, दिल्ली, 2005
39. कवि ने कहा- विष्णु खरे, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
40. और अन्य कविताएं- विष्णु खरे, राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
41. धूप घड़ी- राजेश जोशी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
42. अंधेरे के विरुद्ध- विजय कुमार "संदेश", क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी नई, दिल्ली, 2015
43. काल बांका तिरछा, लीलाधर मंडलोई, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2004

44. सांझ का नीला किवाड़, भावना शेखर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2015
45. धरती एक पुल, अनिल जोशी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004
46. इन दिनों- कुंवर नारायण, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2002
47. मोर मांदर के थाप- अजीत जोगी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2003
48. दलित निर्वाचित कविताएं- संपादक - कंवल भारती, इतिहासबोध प्रकाशन, 2006
49. अंधियारों से लड़ता हुआ- मलखान सिंह सिसोदिया, उमेश प्रकाशन, इलाहाबाद, 2004
50. कविता कोश (इंटरनेट / गूगल)
51. शोध गंगोत्री (इंटरनेट / गूगल)
52. साहित्य कुंज (इंटरनेट / गूगल)
53. रेख्ता (इंटरनेट / गूगल)
54. हिंदवी इसक 2021 (इंटरनेट / गूगल)
55. हिंदवी इसक 2022 (इंटरनेट / गूगल)
56. इंटरनेट / गूगल/ विकिपीडिया